श्री सुखसागर सद्गुरुभ्यो नमः

श्री भुवन-भानु केवली चरित्र।

हिन्दी अनुवाद।

अनुवादक
सैलाना निवासी
शेरसिंह गौड़वंशी हा० मु० कोटा.

प्रसिद्धकर्ता-
श्रीमती गुरुणीजी श्री सुवर्णश्रीजी के सदुपदेश से
अन्य २ ग्रामके श्रावक श्राविका.

:o:

श्री दिलीप प्रिंटिंग प्रेस, सैलाना में छपी.

प्रथमावृत्ति
१००० प्रति

वी० सं० २४५३
वि० सं० १९८३

न्योछावर
आठ आना

श्री सुखसागर सद्गुरुभ्यो नमः

श्री भुवन-भानु केवली चरित्र ।

हिन्दी अनुवाद ।

अनुवादक
सैलाना निवासी
शेरसिंह गौड़वंशी हा० मु० कोटा.

प्रसिद्धकर्ता–
श्रीमती गुरुणीजी श्री सुवर्णश्रीजी के सदुपदेश से
अन्य २ ग्रामके श्रावक श्राविका.

श्री दिलीप प्रिंटिंग प्रेस. सैलाना में छपी.

प्रथमावृत्ति १००० प्रति | वीर सं० २४५३ वि० सं० १९८३ | न्योछावर चार आना

खरतरगच्छीय

श्रीमान् सुखसागरजी महाराज के संघाडानुवर्तिनी श्रीमती गुरुणीजी श्री पुण्यश्रीजी प्रशिष्या श्री शृंगारश्रीजी की विदुषी स्वर्गस्थ शिष्या

॥ श्री सिद्धिश्रीजी ॥

जन्म वि. सं. १९५७] दीक्षा वि. सं. १९७० [स्वर्गवास वि. सं. १९८०

खरतरगच्छीय

श्रीमान् सुखसागरजी महाराजके संघाडानुवर्तिनी श्रीमती गुरुणीजी साहवा श्री पुण्यश्रीजी की शिष्या श्रीमती सौभाग्यश्रीजी की विदुषी स्वर्गस्थ शिष्या

॥ श्री मनोहरश्रीजी ॥

जन्म वि. सं. १९५६] दीक्षा वि. सं. १९७३ [स्वर्गवास वि. सं. १९८०

भूमिका
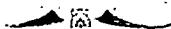
इस ग्रन्थका गुजराती भाषान्तर मुझे साध्वी शिरोमणि श्रीमती सुवर्णश्रीजी महाराज ने दिया व फरमाया कि इसका हिन्दी भाषान्तर होसके तो बनाना जरूरी है। मैंने इसको आद्योपान्त पढ़ा व महान् उपकारी जानकर भाषान्तर शुरू किया।

समयाभावसे इसका हिन्दी अनुवाद करनेमें देरी होने लगी अतः मैंने यह कार्य सीतामहु निवासी श्रीयुत दुलेसिंहजी मेहता को सौंपा उन्होंने यथा शक्य गुजराती का हिन्दी अनुवाद किया, पर आशय की कहीं २ त्रुटियाँ रहजानेसे मुझे पुनः संशोधन करनापड़ा। श्रीयुत दुलेसिंहजी को इस सहायता के लिये मैं साधुवाद देताहूँ:-

श्रीयुत भुवन-भानु केवली महाराजने जो अपनी आत्म कथा व अनंत भवोंका वर्णन संक्षेपमें किया है, वही आचार्य श्रीने इस ग्रन्थमें बताया है।

हमारे चरित नायक ने कर्म, प्रकृति, सुमति, कुमति, संयम, असत्यादि गुण अवगुणों का अपने भवोंके साथ ऐसा वर्णन किया है कि प्रत्येक प्राणी इसे पढ़कर सरलतया यह जानसकता है कि यह आत्मा संसार में कैसे २ दुःख सहन करके कितनी कठिनता से मनुष्य भव उच्च कुलादि प्राप्त करता है।

इस ग्रन्थका विषय आधुनिक उपन्यासों कि तरह चमत्किला न होनेसे सम्भव है पाठकों को रोचक न लगे, पर जो महानुभाव संसारके आध्यात्मिक चमत्कार को जाननेके जिज्ञासु होंगे उन्हें यह अवश्य लाभप्रद होगा. मैं मेरे सुज्ञ पाठकों से विनती करताहूँ कि वे सहन शीलता पूर्वक सम्पूर्ण ग्रन्थ को पढ़ जाँय उन्हें यह अवश्य लाभप्रद प्रतीत होगा।

इस ग्रन्थ के प्रूफादि शोधनका कार्य प्रेस के मेनेजर साहब नेहीं किया है अतः उन्हें धन्यवाद दिये विना नहीं रहसकता. उन्होंने बड़ीही सावधानीसे संशोधन किया है। तदपि दृष्टि दोष से यदि कुछ त्रुटियां रहगई होंतो पाठक सुधार कर पढ़ें।

इस ग्रंथ के आदिमें दो चित्र दियेगए हैं, जिसका विशेष कारण यह है कि ये स्वर्ग आत्माएं इस ग्रंथ कीपूर्ण-प्रेम पात्री थीं।

इसके छपाईमें जिन २ महानुभावोंने द्रव्य सहायता दीहै उनकी शुभ नामावली ग्रन्थ के अंतमे दीगई है ।

कोटा.
१-२-१९२७

भवदीय-
शेरसिंह गौड़वंशी

श्रीजिनायनमः

श्री भुवन भानु केवली चरित्र

(अनुवाद)
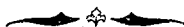
इस जम्बुद्वीप में मेरु पर्वत के पश्चिम गंधिलावती नाम का देशथा जिसमे सब सम्पदाओं का निवासस्थान, समग्रऐश्वर्यसदन–समस्त सदव्यवहारो का गृह, तमाम पाप व्यपारों से मुक्त–धर्म कर्म का मूलस्थान–ऊंचे किले से घिराहुवा गहरी खाई से रक्षित अनेक विचित्रताओं का निकेतन, बहुत विस्तृत और पृथ्वी के ललाट पर तिलक के समान शोभायमान विजयपुर नाम का नगर था जहां अनेक राजाओं का स्वामि पण्डितों में श्रेष्ट, शूरवीर शिरोमणी, महान बुद्धिमान, शत्रुदमन में सिद्धहस्त प्रजापालक, शरणागत रक्षक, अतिथि सत्कारक, दानी चन्द्रमोलि राजा राज्य करताथा ।

एक दिन तेजस्वी राजा चन्द्रमोली, अपने अनेक

मंत्रियों से घिरा हुवा रत्न जटित सुवर्ण सिंहासन पर बैठा हुवा राज्य दरबार को सुशोभित कररहाथा इस समय सिंहासनारूढ़ राजा के तेज के सामने सूर्य्य का प्रकाश भी राजभवन में प्रवेश नहीं करसक्ताथा. सिंहासन के रत्नों की चमक और राजा के तेजस्वी ललाट की आभासे सारा राजभवन देदीप्यमान हो रहाथा। इसी समय एका एक कहीं से बहुत सुगंधित पवन आकर सारे सभाजनों को सुखी करने लगा और साथही अनेक प्रकार के दैविक वाजित्रों, किन्नर देवताओं के मधुरगीतों और अप्सराओं के नूपुरों की मधुर ध्वनि सबों के कानों में पहुँची-चकित होकर राजा व समस्त सभाजन उत्कण्ठापूर्वक ऊँचे नेत्र करके एकटक आसमान को देखने लगे और आपस में एक दूसरे से पूछने लगे "यह क्या है" इस प्रकार ज्योंहीं राजाने भी आश्चर्य चकित हो मंत्रिमण्डल से दर्याफ्त किया कि "यह क्या है" त्योंहीं चन्दन चर्चित ललाट वाला, सुवर्ण दण्डधारी, मुक्ताफलके हारसे सुशोभित एक प्रतिहारी ने सभामण्डप में प्रवेश कर, प्रणामकर अतिहर्ष

पूर्वक राजासे निवेदन किया कि हे स्वामिन्! आपका नियुक्त किया हुवा पूर्वदिशा का उद्यान पालक भेटकी आज्ञा चाहता है राजा की अनुमति पा जल्द प्रतिहारी ने वापस जा उद्यान पालक को राजा के समक्ष उपस्थित किया।

सन्मुख होतेही विनयपूर्वक प्रणाम करके उद्यान पालक ने हाथजोड़ निवेदन किया कि हेदेव, मैं श्रीमान को बधाई देने उपस्थित हुवा हूँ कि आपके उद्यान में अनेक देव, दानव, विद्याधर और मनुष्योंके पूज्य, अपने चरण स्पर्श से भूमिको पवित्र करने वाले श्री भुवन भानु केवली पधारे है-इस खुशखबरी के सुनतेही राजा बहुत प्रसन्न हुवा और थोड़ी देर तक अवचनीय सुख का अनुभव कर उसने द्वारपाल को बहुतसा इनाम देकर विदा किया।

तत्पश्चात शीघ्रही सब तरह की सामग्री तय्यार करा कैलाश पर्वत के सद्रश विशालकाय हाथी पर सवार हो देव दानवो से मथित समुद्र के झाग के समान निर्मल और सफेद छत्रसे धूपका निवारण करता हुवा शरद ऋतु के

चन्द्र समान उज्वल चँवरों से सुशोभित हो-अनेक हाथी घोड़ों, रथों और चतुरंगिणी सेना व नगर निवासियों सहित केवली भगवान को वन्दना करने के लिये पूर्व उद्यान में आया और दूरसेही-हाथी पर से उतर तमाम राज्य आडम्बर से मुक्त हो-जूते उतार जलसे हाथ पैर धो,कुल्ला कर, हाथजोड़, नमस्कार करता हुवा, एक चित्त हो भगवान् के सन्मुख आया और अति हर्ष तथा भाव पूर्वक सुवर्ण सिंहासन पर विराजमान केवली भगवान की तीन प्रदीक्षणादे, नमस्कार कर, सुखसाता पूछ यथोचित स्थान पर वैठगया और दोनो हाथ जोड़कर विनय सहित इस प्रकार प्रश्न करनेलगा।

हे भगवन् आप के यहां पधारने से मुझे इतना हर्ष हुवा है जितना कि एक भिक्षुक को अकस्मात रत्नों कि वृष्टी से होसक्ता है मेरे वाल्यकाल में मुझे कुच्छ मुनिमहाराजों के सहवास का सोभाग्य प्राप्त हुवा था पर उस समय वाल बुद्धि के कारण मैं कुछभी आत्महित साधन नहीं कर सका उस समय उन कृपालु मुनिवरों ने मुझमें थोड़े वहुत अच्छे

संस्कार प्रविष्ट किये थे या उसके थोड़े दिनों बाद ही राज्य प्रबन्ध की झन्झटों में पड़ने से वे सारे संस्कार लुप्त होगये और मेरा मन विषय वासनाओं से भरगया इस प्रकार हो मुनिराज, मेरा अबतक का जीवन वृथाही गया पर पूर्व के सुसंस्कारों के कारण गत रात्रि में मुझे कुछ ज्ञान हुआ तो मैंने विचार किया कि- इस प्रकार यहाँ आरम्भ में घिरा हुआ मैं जिन अनेक पापों का संञ्चय कर रहा हूँ उनका प्रतिफल भोगने का जब समय आवेगा तब कौन मेरी रक्षा करेगा। इस वास्ते अब यदि मुझे किसी योग्य मुनिराज का संयोग मिले तो मैं अपने इस संशय का निवारण करूं पर साथही यह शंका उत्पन्न हुई कि मुझसरीखे पथभ्रष्ट प्राणी को योग्य मुनि का समागम बहुत कठिन है। "इस प्रकार विचार करते २ रात बीतगई और ज्योंहीं मैं प्रातः कृत्य से निपट अपनी राज्यव्यवस्था देखने दरबार में आया त्योंहीं मारवाड़ के मुसाफिर को क्षीरसागर के समान, चातक को ग्रीष्म ऋतुमें स्वाती के जल के समान, सूर्य के ताप से तपे मनुष्य को आम की छाया समान और

महारोगी को अमृतरस के समान मुझे अपने पूर्ण भाग्योदय से श्रीमान् के आगमन की सूचना मिली-आपके आगमन की सूचना मिलते ही मैं घोर संग्राम में हारा हुआ व्यक्ति के समान आपसरीखे महाबलवान की शरण में दौड़ कर आया हूँ अब आप कृपाकर मुझे बताइये कि इस संसार में मेरी रक्षा कौन करेगाः–

राजा का यह प्रश्न सुनकर अपनी वाणी से अज्ञान अंधकार को दूर करनेवाले मुनिराज ने उत्तर दिया कि हे महाराज जिसने आप सरीखे अनेक प्राणियों की रक्षा की है और विशेष कर मेरी भी रक्षा की है वही तुम्हारी भी रक्षा करेगा।

यह सुन राजा अचंभित हो कहने लगा-हे महामान्य आपतो संसार के रक्षक हैं आपको रक्षा करने वाला कोई अन्य व्यक्ति हो यह बड़े आश्चर्य की बात है कृपया साफ २ यह बतलाइये कि वह अति ऊँचा व्यक्ति कौन है?

इस प्रश्न को सुनकर मुनीश्वर कहने लगे, "हे महाराज,

यह विषय बहुत लम्बा है और आपका मन विक्षिप्त है इसलिये इस समय इसका विवरण नहीं कियाजासका" ।

ऐसा सुनकर राजाने कहा, हे भगवन ! एसा न कहो क्योंकि एक मूर्ख प्राणी भी सुधापान की प्राप्ति होतेहुए विषपान की प्राप्ति के लिये उत्सुक नहीं होता तथा जैसे मयूर मेघके आगमन की राह देखता है वैसे ही मैं आपकी राह देखता था इतनेहो मैं आपका यहां पधारना होगया, हे भगवन ! मुझे अभी किसी प्रकार का दूसरा व्याक्षेप नहीं है इसलिये हे पूज्य, आप विनाकिसी विकल्पके अपने अमृत मय वचनों से मेरे श्रवणयुगल को सन्न कीजिये राजा की ऐसी जिज्ञासा जानकर ज्ञानी बोले, यदि ऐसा हो तो सावधान होकर सुनो ।

अनन्त जीवों का निवासस्थान, सर्व सम्पत्तियों का मन्दिर, समस्त उत्तम जनो से अनियुक्त, समस्त आश्चर्यों का स्थान, ऐसा लोकोदर नाम का एक नगर था, हर एक प्रकार के वर्ण, जाति, गोत्र, फल, पुष्प, शिल्पकला,

विद्या, धन, रत्न, नीति, धर्म, कर्म, विलास, सुन्दर नेपथ्य, नाटक, आदि अनेक प्रकार की वस्तुयें उस नगर में दृष्टि गोचर होती थीं उस नगर में परस्पर अत्यन्त विरुद्ध और महाबलिष्ठ, धर्म्मात्मक, और पापात्मक नाम की दो सेना हमेशा रहती थीं उनका नायक जिसने कि तीनों जगत् वशमें करलिये थे तथा नित्य सर्व प्राणियों का अ-हितही करने में तत्पर रहनेवाला मोहराज नाम का महिपति था वह राजा इन्द्रों को भी अपनी आज्ञा में रखता था चक्र वर्त्तियों को भी अपने निर्देश में रखताथा तथा अन्य तमाम राजा तो उसके दास की तरह रहतेथे, वहां के रहनेवाले तमाम उसके किंकर बने हुए थे, ऐसी प्रबलता होनेसे देव नहीं होते हुए भी वह अपने को देव मानताथा, तत्व नहीं जानतेहुएभी अपने को तात्त्विक समझताथा. सर्वदा कुप्रकृति पक्ष में वह विशेष लगा रहता था महा पाप क्रियाओं में लगा रहना पसंद करताथा वह राजा महाहिंसक, असत्य भाषी, चोर, परस्त्रीलम्पट, महारम्भ करनेवाला, रात्री भोजन में रत, क्रोधी, मानी, मायामय लोभी था तथा

पुत्रादिक के प्रेमबन्धन रूपपाश में बँधाहुआ कलत्रादिक के अनुराग रूप सांकल से नियन्त्रित हमेशा शोक को उत्पन्न करानेवाला, दुर्गति का बिलकुल भय नहीं रखने वाला, नर्क तिर्यञ्च आदि की हलकी गति में वार २ ले-जानेवाला आदि अनेक दुर्गुणों से भरा हुआ मोहराजा की सेना निरन्तर सर्व प्राणियों को दुःखही देती रहती है।

दूसरा चारित्र धर्म नामका राजा धर्म्म सेन्य का नायकथा वह सम्यक्त्व, सतबोध, सुशास्त्र, शम, मृदुता, गाम्भीर्य सरलता, औदार्य्य, सत्य, शौच, और दम आदि अनेक सुभटों से घिराहुआ था, सचमुच वह प्राणियों को बहुत हितकर था, वह अपनी सत्ताका उपयोग इस प्रकार करता था-देव को ही देव माने, गुरु को ही गुरु माने, तत्त्व मे ही तत्त्व बुद्धि करावे, अवस्तुओं के प्रतिबन्ध को त्याग करावे, सत्य क्रियाओं में लगावे, आत्मवत् समग्र प्राणियों का रक्षण करावे, असत्य का त्याग करावे, चोरी को दूर करावे ब्रह्मचर्य्य पलावे, परिग्रह की बुद्धि को शीतल करावे, रात्रि भोजन को दूर करावे, प्रथम रस से विभूषित

करे, मृदुतासे मण्डित करावे, सरलता से शृंगार करावे, सन्तोष से परिचय रक्खे, निविड़ स्नेह बन्धन से मुक्त करे, अनुराग रूप सांकल का बन्धन तोड़े, इस भव में भी महासमृद्धि देवे, श्रेष्ठत्व प्राप्त करावे, लघुता को दूर करावे, सर्व मनुष्यों की प्रशंसा को प्राप्त करावे, सुगति प्राप्त करावे, नर्क और तिर्यग्गति को रोके, महर्धिक देवताओं में जन्म देवे, राज्यकामा, ऐश्वर्यकामा, और पूज्यत्व प्राप्त करावे ।

इस प्रकार से वह राजा संसार में सुखकर होने से और अखीर में मोक्ष लेजानेवाला होनेसे उसको हितकर की उपमा दीजाती है ।

इस प्रकार ये दोनों राजा अपनी २ सेनाओं को लिये हुए निरन्तर सुख दुःख प्राप्त कराते हुए अनतंकाल से युद्ध के अन्दर लगे हुए हैं परन्तु दोनों में से एक का भी पराजय नहीं होता कारण कि उन दोनों से भी गरिष्ठ और तीन लोक का नायक ऐसा कर्म परिणाम नामक महर्धिक

राजा है शुभ और अशुभ रूप से उसका वर्णन किया जाता है परन्तु वह मात्र योगियों के ही लक्ष में आसक्त है। स्थूलबुद्धि वाले प्राणी उसका यथार्थ रूप देख नहीं सकते वह मोहराजा का बड़ा भाई कहलाता था और लोकस्थिति का छोटा भाई था तथा काल परिणति नाम की स्त्री का पति था वह बड़ा समर्थ है और नाटक का उसको बड़ा शौक है।

वह राजा इस प्रकार से हमेशा विचित्र लीला करता रहताथा। "देवताओं को वह किसी समय गधे बना देता था और गधे को देवता बनाता था, तिर्यञ्चों को नारक और नारक को तिर्यञ्च बनादेताथा। हाथियों को कीड़े और किड़ों को हाथी बनाता था चक्रवर्त्तियों को भिखारी और भीखारियों को राजा बनाता था, धनाढ्य को निर्धन और निर्धन को एक क्षण में धनाढ्य बनादेता था, निरोगी को तुरन्त रोगी और रोगी को निरोगी बनाता था, चिन्तावान् को निश्चिन्त और निश्चिन्त को चिन्तावान बनादेता था, सुखी को दुःखी और दुःखी को सुखी

वना देता था." इस प्रकार करने से यह सर्व शक्तिमान् और बहुरूपी के सदृश प्रसिद्ध हुआ था. मोहराजा असंख्य प्राणियों को, असंख्य देवताओं को, अगणित मनुष्यों को तथा अनन्त तिर्यञ्चों को पात्र बनाकर नाटक की रचना करता था, कर्म परिणाम को वह अत्यन्त प्रिय होने से वह सर्वों को वचाता था और स्वयं वह उसमें आनन्द मानता था, जब कर्म परिणाम चरित्र धर्म के पक्ष में जाय तब अवश्य वर्तन चलाता था और कुछ नहीं तो वह मोहराजा के पक्ष का पोषण करता था। यह साधारण नियम था कि जिस पक्ष में वह उपस्थित रहता था उस पक्ष की अवश्य जय होती थी और विपक्षवालों की हारहोती थी।

एक समय मोहमहिपति उस को दोनो तरफ की सेना में जाते देख क्रोधित होकर उससे कहनेलगाः- "हे महानुभाव! हम हमेशा तेरा पक्ष करते रहते हैं, प्रिय भाषण वोलते हैं, हमेशा हृदय से आप को प्रिय लगे वैसा नाटक करते रहते हैं, सदागमादि वैरी तो हमेशा नाटक को छिन्न भिन्न किया करते हैं इतना करते हुए भी तुम सदा

इनका पक्ष लेकर किस प्रयोजन से हमेशा इतनाही नहीं वरन् इस जैसे पात्रों को तत्कालही मोक्ष का चूर्ण करते हो ? यह हम नहीं समझसकते अथवा यह तुम्हारी बहुरूपी चेष्टा को न जानसकते हैं ।

इस प्रकार मोहमहिधर के वचन सुनकर मन्दहास्य से उसके शिर का चुम्बन कर और आनन्द पूर्वक उसका आलिङ्गन कर कर्मसंचय राजा आँखों में आँसू लाकर कहने लगाः–"हे वत्स ! उसकी सर्व चेष्टायें मैं अच्छी तरह जानता हूँ। और जो चेष्टायें तू कहता है वैसी ही है व कई वख्त मेरी आज्ञा का भी उलङ्घन करके स्वेच्छा पूर्वक वर्तता रहता है तथापि इसमें मैं निरुपाय हूँ मेरा इनके साथ भी अनन्त काल से सम्बन्ध है, इसलिये कदाचित कोई २ समय पर इसका भी भला करना पड़ता है परन्तु मेरे चित्त में तो तूही हमेशा निरन्तर निवास करता रहता है, वास्ते हे वत्स ! तेरी इच्छा हो सो भी तू प्रकट कर मैं तेरी इष्ट सिद्धि करूंगा"। यह बात सुनकर मोहराजाने कहा-हे महाराज जो आपकी ऐसी ही प्रसन्नता है तो आप के अव्यय

पुरमें से ऐसे संसारी जीव दीजिये कि जिनकी सहायता से सुख को देने वाला समग्र शुक्ल पक्ष का निर्मूल कर सकूं, ऐसे वचन सुनकरके कर्म परिणाम राजा ने असम् व्यवहार नगर में से दूर भव्य और अभव्य ऐसे सहाय उसको दिये। मोहराजा भी उनको पाकर सर्वत्र विलास करने लगा यह बात चारित्र धर्म के सैनिकोंने अपने राजा से कही जिसको कि सुनकर सर्व सैन्य आनन्द रहित, निरुत्साहित और क्रिया रहित होगया। सेना की इस प्रकार की व्यवस्था देख कर सत्तबोध नामका मंत्री अपने स्वामी से कहने लगा, हे देव ! इस प्रकार से आप सत्व और उत्साह रहित होकर क्यों बैठ रहे हो। महापुरुष तो आपत्ति में सदा कुछ न कुछ उपायही ढूंढा करते हैं। पाँव पसार कर पड़ेरहना ये तो अबल और कायर पुरुषों का काम है। अग्नि से जलते हुए घर को देख कर जो हाथ बान्धकर बैठे रहें उसका और सर्वस्व नाश के क्या हो सक्ता है, राहूसे ग्रसित सूर्य्य क्या अपने पराक्रम को छोड़ देता है ? वैसेही यदिवह समस्त ग्रस्त हो जाय तो क्या जगत् को प्रकाशित नहीं करता है अतः धैर्य्य का अवलम्बन करके

इस विषय में कोई भी उपाय सोचना चाहिये। इस प्रकार सुन करके चारित्रधर्म राजा ने कहा "हे मंत्री! उपाय सोचने का काम खास तुम्हारा है। इसलिये इस विषय में जो तू कहे हम करने को तैयार हैं"। यह बात सुनकर सतबोध मंत्री प्रणाम करके विनय पूर्वक बोला "हे नाथ! जो ऐसाही है तो अपने को शीघ्र उस कर्म परिणाम राजा के पास चलना चाहिये। क्योंकि अग्नि से जले हुए के लिये अग्नि ही अच्छी औषधि है उसको शत्रु समझ करके उसके पास नहीं जाना ये उचित नहीं है क्योंकि सर्वस्व जला देनेवाली अग्नि की भी लोग उपासना करते हैं और अपन तो उसके शुभ पक्ष का हमेशा पोषण करते रहते हैं, यद्यपि अपन जानते हैं कि वह अपना सर्व नाश करने वाला है तथापि वह अपना सत्कार जरूर करेगा, क्योंकि वह दुष्ट मोहादिक के सदृश दुष्ट नहीं है"। यह बात सुनकर चारित्र धर्मराजा अपने सतबोध मंत्री को आगे करके थोड़ासा अपना परिवार लेकर कर्म परिणाम राजा के पास गया और कहनेलगा "हे महाराज! आपने एकही पक्ष में रहकर

ऐसी बात कभी नहीं की क्योंकि आप समदृष्टि वाले हो इसलिये अब हमारी उपेक्षा न करते हुए आप अपनी असली स्थिती का परिपालन करो" । यह बात सुनकर वह राजा बहुत काल पर्यन्त चुपचाप बैठारहा तत्पश्चात् बहुत विचार करके उसी नगरी में से एक सहायक लाकर और उसे सत्बोध मन्त्री को बताकर चुपकेसे कान में कहा, सांप्रत में तो यद्यपि यह मेरी आज्ञा से इसका अनुगामी होगा, क्योंकि ऐसा नहीं करने से मोहराजा के कुटम्ब का तुरन्त नाश होजावेगा, तदपि धीरे २ आपको प्रगट रीति से सहाय करेगा। यह सुनकर के चारित्र धर्म राजा अपने मन्त्री सहित स्वस्थान को गया और वहां जाकर अपने मंत्री से कहनेलगा, "हे महानुभाव! यह उसने क्या किया मोहराजा को तो उसने बहुतसे सहायक देदिये और अपने को केवल एकही दिया और सो भी किसीसमय में दर्शन देगा" यह बात सुनकर जरा हँस कर बोला– हे प्रभो ! क्या जगत् में आपने ऐसा नहीं सुना ? कि गायों का नाश करने पर गोबर की प्राप्ति की भी तारीफ होती है। और वह मोहउसका प्रेमपात्र भाई है और

अपन तो मोह के हमेशा वैरी हैं इतनाही नहीं वरन् अपनतो हमेशा उसका नाश करने का प्रयत्न किया करते हैं और कर्मराजा की बड़ी वहिन लोकस्थिति का प्रेम मोहराजा से अपने ऊपर बहुतही कम मीठी दृष्टि है परन्तु मैं अकेला हूँ और दुश्मन बहुत हैं उनसे कुच्छ भी डरनेका कारण नहीं क्योंकि सूर्य्य अकेला होते हुए भी गाढ़ अंधकार का नाश करता है, ऐसा विचार करके कि बहुत समय पश्चात् अपने सहायक का अपने को दर्शन होगा, दुःख करना उचित नहीं क्योंकि क्षुधातुर की पीड़ा से उदम्बर जल्दी पकता नहीं है। इसलिये हे देव ! आप धैर्य्य धारण करो क्योंकि धीरे २ अशुभ का नाश होकर सब ठीक होजाएगा ।

इस बातको अत्यन्त सावधान हो सुनताहुआ चन्द्र-मौलिक राजा हर्षपूर्वक, मनमें इस प्रकार विचार करने लगाः-अहो ! सतबोध मन्त्री की भी श्रेष्ठता कैसी अनुपम है। वह यथा नाम तथा गुणा करके शोभित है और ऐसा बोलना भी किसीको आए। इन महात्माने ऐसी आश्चर्ययुक्त

बात कहकर मेरे ऊपर बड़ा उपकार किया है । ऐसा विचारकर आँखे बन्द करके, क्षणवार परमानन्द का अनुभव कर, राजा कहने लगा:- " हे भगवन् ! चारित्र धर्म के सहायता देनेवाले जीवका फिर क्या हुआ यह बात सुनने की मुझे बहुत अभिलाषा है। इसलिये कृपाकर सर्व वृतान्त सुनाओ ।

इस प्रकार शुभाग्रह से ज्ञानी बोले:- " हे महाराज सावधान होकर सुनो कर्मपरिणाम राजा ने उन जीवों को असंव्यवहार नगरमेंसे लेकर व्यवहार निगोद में रखे और स्वयं गुप्त रूप धारण कर उनके पास रहा यह व्यतिकर मोहादिक ने जब जाना तो उन्होंने विचार किया:- "अहो ! ये अपना नायक नारदजी के समान कलाप्रिय लगता है । घंटा के लटकन सदृश, डमरु के मणि सदृश, कमल की नली के समान और पातंग के मृदंग सरीखा हमेशा दोनों पक्ष में आता जाता रहता है और इसको बार २ कहते हुए भी वह कुछ भी ध्यान नहीं देता । भरे हुए घड़े के पासही सब जाया करते हैं

इसने यह कहावत सत्य करके बताई है, कहा है। कि—

'स्वभावो नोपदेशेन, शक्यते कर्त्तुमन्यथा।
सुतप्ताव्यपि तोयानि, पुनर्गच्छति शीतताम्' ॥

उपदेश करते हुए भी स्वभाव फिरनहीं सकता है क्योंकि पानी को बहुत गरम कियाजाय तो भी पीछा ठंडा होजाता है। इसलिये अब अपने भुजबल से ही समयानुसार उपाय करना ठीक है"। इस प्रकार विचार करके क्रोधित हुए मोहादिक, चारित्र-धर्म की सेना के सहायता करने वाले, उस संसारी जीव के पास आये और उस व्यवहार निगोद में विचित्र प्रकार के अनेक प्रकारके दुःखों का अनुभव करते हुए ऐसे उस संसारी जीवको उन्होंने अत्यन्त उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी काल तक वहीं पकड़ रक्खा। अन्यदा कभी मोहादिक जब कुछ आगे पीछे हुए, तब कर्म परिणाम ने उस नीगोद जीवको पृथ्वीकायमें लाकर रखा। उससे मोहादिक ने वहां-सुनकर, लाखों प्रकार के दुःख दिखाते हुए

असंख्य उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी काल पर्यन्त उसकी कदर्थना की। वहां कुछ अंतर पाकर कर्मपरिणाम उसको अपकाय में ले आया, वहांसे तेजस्कायमें औरफिर वहांसे वायुकाय में उसको लेगया। वहांपर प्रत्येक कायमें क्रोधित होकर सामने पड़ेहुए उन मोहादिक ने उसको नाना प्रकार के दुःख दिखाकर असंख्य उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी कालतक उसकी कदर्थना की पश्चात् उसको सत्तर कोटि सागरोपम तक वनस्पतिकाय में अटका रखा और बीच २ में अत्यन्त क्रोधित हो उन दुष्टोने विचारे संसारी जीवकी बहुत कदर्थना की, पराङ्मुख होनेसे मोहादिक ने उसका व्यवहारी निगोद में और पृथ्वी निगोद में वार २ पीछा लेजाकर एकेंद्रिय जन में वार २ अटकाकर, असंख्य पुद्गल परावर्त्त तक, उसी प्रकार कदर्थना की। समय पाकर कर्मपरिणाम उसको विकलेन्द्रिय में लेगया यह खबर पड़ते ही मोहादि दुष्टों ने उसके पीछे आकर उसको बांधकर असंख्य वर्षों तक उसकी वहांही स्खलना की। वहांसे अत्यन्त क्रोधित होकर मोहादिक ने फिर उसको पकड़कर उसी एकेन्द्रिय

में डाला और वहां उसको अटकाकर पूर्ववत् असंख्य पुद्गल परावर्त्त तक बांध रखा। फिर किसी समय वह विकलेन्द्रिय में आया, इतनेमें उसको बांध कर वहांही असंख्य काल तक उन्होंने उसकी कदर्थना की। इस प्रकार विकलेन्द्रिय में आवागमन करते हुए अनन्त पुद्गल परावर्त्त तक उन्होंने उसकी कदर्थना की। पश्चात् किसी समय कर्मपरिणाम महाकष्ट से उसको सम्मूर्च्छिम् पञ्चेन्द्रिय में लेगया। इतनेही में उन दुष्टोंने दौड़ेहुए वहां जाकर उसको आठ भव में पूर्व कोटि पृथकत्व तक अटका रखा और 'आगेपर चारित्र धर्म का सैन्य इसका सहायक होगा' इस प्रकार भयभीत होकर उन्होंने फिरकर पूर्वोक्त एकेन्द्रिय में डाला, और वहां से पहिलेजैसा विकलेन्द्रिय में और वहां से सम्मूर्च्छिम् पञ्चेन्द्रिय में डाला। वहां आवागमन करते हुए उसको अनन्त पुद्-गल परावर्त्त पर्यन्त अटका रखा। पश्चात् एक समय कर्म राजा बड़ी मुश्किल से उसको गर्भज पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चमें लेगया। वहां भी वे दुष्ट तुरन्त पहुंचगये और आठ भव में पूर्व कोटि पृथक्त्व काल तक उसको वहां

पकड़ रखा उसके बाद बहुत क्रोध करके एकेन्द्रिय से तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय पर्यन्त लेगया और वहां अनन्त पुद्-गल परावर्त्त काल तक अटका रखा ।

एकसमय पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चमें मत्स्यादि भव में आया हुआ उसको देखकर मोहादिक ने विचार किया कि'— "अहो यह कर्मपरिणाम इसको आगे २ लिये बिना रहता नहीं है, और किसी समय अपना दुश्मन होजावेगा" इससे ज्यादे क्रोधित हो उन्होंनें उसको महापाप में डाला । हमेशा जीव हिंसा कराकर, सिर्फ मांस भक्षण में उसको प्रेरित किया और वहां से उसको महानरक में डाला, वहां अनेक दुःखों का अनुभव करने से असंख्य काल तक उसको बांध रखा, अन्यदा वहां से कर्मराजा उसको पक्षी आदि की योनियों में लेगया, इससे अति क्रोधितहो मोहादिकों ने फिर पूर्ववत् एकेन्द्रिय से नरकावास तक लेजाकर उसको वहांही आवागमन कराकर अनन्त पुद्गल परावर्त्त पर्यन्त उसको अटका रखा । फिर एक समय वहांसे कर्मभूप उसको बड़े कष्टसे संमूच्छिम

मनुष्यों में लेगया। इतने में वहां सत्वर आकर मोहादिकों ने आठ एकेन्द्रियों से सम्मूच्छिम मनुष्य तक आवागमन कराकर, अनन्त पुद्गल परावर्त्त तक उसको बांध रखा। इसके बाद बड़ी मिहनत से कर्म-परिणाम राजा उसको वहां से अनार्य देश के गर्भज मनुष्यों में लेगया। इससे मोहराजा विस्मित होगया और उसके सब सैनिक भयभीत हुए 'अहो! अपन मरगये, क्योंकि दुश्मन अब बहुत नजदीक आगया है'। इस प्रकार उत्साह रहित होकर वे निराश होगये, इतने में रसगृद्धि और अकार्यप्रवृत्ति नाम की दो स्त्रियें खड़ी होकर बोली कि:- "अरे यों तुम क्यों डरते हो? क्योंकि यहां रहे हुए इस गरीब को तो हम वशमें करलेंगे, अगर जो आपकी आज्ञा हो तो इसका गला पकड़कर तुम्हारी सेवा में हाजिर करें।" इस प्रकार सुनकर मोह-राजा अत्यन्त प्रसन्न होकर बोला:- "अहो हो? अपनी सेना में स्त्रियें भी इस प्रकार बलवान है? हे वत्से! तुम वहां जल्दी जाओ और तुमने कहा वह कार्य्य करो तुम्हारा कार्य्य सिद्ध होगा और हम सैना सहित आकर तुम्हारी

सहायता करेंगे" मोहराजा के ये वचन सुनकर 'हम बहुत हिम्मत से काम करेंगी' इस प्रकार प्रतिज्ञा कर वे दोनों वहां गईं। फिर रसगृद्धि ने उसको शराब, मांस, अपेयभरन और अभक्ष्यभक्षण में लगाया और अकार्य प्रवृत्तिओं माता और बहिन आदि के साथ कुकर्म में प्रवर्त्ताया। वहां से थोड़े समय में उसको महा नरक में डालदिया और फिर पूर्ववत् मत्स्य, एकेन्द्रिय स्थानों में लेजाकर वहां अनन्त पुद्गल परावर्त्त पर्यन्त उसको अटका रखा, फिर एक समय कर्मपरिणाम राजा लाग रक्ख कर उसको अनार्य देश की मातंग जाति में लेगया। इतने मे वहां रसगृद्धि और अकार्यप्रवृत्ति ने अभक्ष्यभक्षण आदि में प्रवर्त कर नरकादिक में डालकर, फिर लीला मात्रों में उसको एकेन्द्रिय आदि में फिरा कर, अनन्त पुद्गल परावर्त्त तक बांध रखा। फिर वहां से आर्य देश में वैश्यादिकों के कुल में उत्पन्न हुआ वहां भो उन दोनों दुष्टाओं ने उसको पाप कराकर एकेन्द्रियादि में लेजाकर फिरा २ कर अनन्त काल तक बांध रखा फिर वह किसी समय विशुद्ध जाति और क्षेत्र के मनुष्य योनी

हारकर प्रत्येक समय एकेन्द्रियादिक में अनन्त पुद्गल परावर्त्त पर्यन्त फिरा।

एक समय फिर किसी तरह से मनुष्य जन्म को प्राप्त हुआ इतने में मोहराजा द्वारा नियत किए हुए महापाप नामक कोतवाल के उपदेश से किसी समय शिकारी, किसी समय धीवर, किसो समय पारधी और किसी समय जिव हिंसक, किसी समय केवल मांसहारी, शराबी बना और भी किसी जगह खात देने से, किसी वख्त धाड़ा डालने से, किसो समय वन्दिगृह से तथा किसो जगह कर्णादि काटने आदि अनेक प्रकार के पाप एकत्रित करने लगा। किसी समय कूटकार, किस समय जुआरी और धूर्त विद्या के प्रयोग से लोगों को ठगनेसे कहीं कोतवाल, गुप्तिपाल और अमात्यादिक के अधमा चरण की सेवना करने से, किसी समय मनोबन्ध तिल और शेलड़ी पीलने से, किसी समय मांस बेचने से, किसी समय शराब बेचनेसे और किसी समय शस्त्र, लाख, लोह, हल, मूसल, ऊखल, शिलापट्ट और घट्टी आदि

अनेक वस्तुओं के बेचने से अपने कुटुम्ब का खराब तरीके से आजीविका चलाने वाला, ऐसा वह फिर एके-न्द्रियादिक में कई वार फिरा, और वहां पूरा दुःखी होकर अनन्त पुद्‌गल परावर्त्त तक रहा।

इस प्रकार से वह जीव मनुष्य योनि में गमनागमन कर रहा था इतने में मोहराजा अपने मंत्रियों को एकान्त में बैठा करके चिन्तायुक्त वचन कहने लगा। अहो ? इस संसारी जीव के साथ, मेरी आज्ञा से असंव्यवहार नगर में से यह मिथ्यादर्शन नामका महाभाग क्षणवार भी उससे अलग नहीं होता ? तथा ज्ञानवर्ण और अज्ञान ये दो महा सुभट भी इसके साथ २ ही भ्रमण करते रहे ? इन तीनों के सहवास से देव गुरु, तथा धर्म का तत्व लेश मात्र भी धारण नहीं किया ? ज्यादे क्या कहें इसके कान में धर्म ऐसे अक्षर तक पड़े नहीं ? तथा जीन वचन का अर्थ भी कभी समझा नहीं। मात्र अहार, निद्रा, और मैथुन में आसक्त हो कर विचारा भ्रमण करता रहा। अब इस समय कर्म परिणाम उसको कनकपुर में अमर सेठ और नन्दा

में डालागया। यह देखकर मोहमहाराजा ने उसके पास दर्शनावरण नाम का खुदका सामंत भेजा। उन्होने उसको अंधा बनाया और अशुभ नाम कर्म में उसको पापण के सदस बेडोल बनाया। इस तरहसे उसकी सर्वथा शोचनीय दशा कराकर और कष्टप्राप्त मनुष्य भवको वृथा कराकर फिर एकेन्द्रिय में डाला और वहां अनन्त काल तक बांधरखा। कदाचित् फिर कर्मपरिणाम फिरा कर उसको मनुश्य भव में लेगया। इतनेमें दर्शनावरण सामंतने उसको पकड़कर मुकत्व आदि दुःख देकर उसकी कदर्थना की। इसप्रकार उसको लीला मात्र में कणहीन, पङ्गु आदि बीभत्स रूपवाला बनाकर फिर अनन्त वार अनन्त पुद्गल परावर्त्त तक उसको विडम्बनाएं डाली।

एक समय कर्मपरिणाम फिरबड़े कष्टसे उसको मनुष्ययोनि में लेआया। इतने में मोहराजा ने असाता वेदनीय नामका एक दुष्ट चोर भेजा। उसने किसी समय उसको जन्मसे ही महा कुष्टी बनाया। किसीसमय

वातकी, किसीसमय जलोदरवाला, किसीसमय श्वासवाला, किसीसमय भगन्दरवाला, किसीसमय रक्तकी गांठोंवाला, किसीसमय पित्तवाला, किसीसमय हरसवाला, किसीसमय शिरदर्दवाला, किसीसमय कपालरोगी, किसीसमय नेत्ररोगी, किसीसमय कान, कंठ, तालु, जीभ, दांत, ओष्ठ, शाल और मुखरोगी, किसीसमय हृदयशूली, कुक्षिशूली, पृष्ठशूली, आमरोगी बनाया। उसकी यह स्थिति हमेशा बढ़ती जातीथी। इतनी तेज पीड़ा समूह से शरीर दुर्बलहोता, आक्रन्दन करता, दुःख सहता, शोककरता, विलापकरता, परिचित् या अपरिचित् सब सुजनोंसे अपनी हीनता निवेदन करता, लाचार होकर कन्दमूल आदिका अहार करता, बहुत कड़वेक्वाथ को पीता, अत्यन्त तेज सेंकडो चूर्णखाता, अनार्य जनोंके उपदेश से अथवा अपने विचार से अपने शरीर की शुद्धता के लिये नहीं खानेयोग्य औषधि खाता, न पीनेयोग्य वस्तु पीता, नहीं करने योग्य कामकरता, मंत्र, तंत्र, और बलिदान आदि के प्रयोग में महारंभ करता, और महापापोंका सञ्चय करता, । ऐसा वह मनुष्य भव

भार्य्या के तुत्र तरीके वहां लेजाना चाहता है। उस नगरमें कुछ धर्मका प्रचार है सो यह जीव वहाँ पहुंच गया तो फिर अपना जोर चलसकेगा या नहीं, यह समझमें नहीं आता। यह सुनकर मिथ्यादर्शन मंत्रीने अज्ञानके हाथमें ताली देकर कहा :-बहुतही अच्छा हुआ, कारणके अमर सेठके घरमेंतो बालकसे वृद्ध पर्यन्त सब अपनेही आज्ञामें चलते हैं। इससे जो अपनेयोग्य विशेषकार्य्य होगा तो वहीं अपन सबोंके अन्दर मिल जावेंगे तथा अपने स्वामि कीभी सेना अनन्त है सो वहां रसगृद्धि, अकार्य्य प्रवृत्ति और व्याधि आदि स्त्रियोंकी भी अपनेको सहायता मिलेगी।

इसप्रकार मिथ्यादर्शन मंत्रीके बहुत बहादुरीके वचन सुनकर, बहारचित्तव्या, मोहनामके सभा मण्डपमें बैठी हुई एक स्त्री और एक नपुंसक अट्टहासपूर्वक हँसे। उससे मोहराजाने विस्मय होकर विपर्यास निवह नामके सिंहासनपरसे खड़े होकर पूछा :—"हे वत्से? तू और ये नपुंसक अभी किस कारणसे हँसे?" फिर वह

सुकुमारी प्रणाम करके बोली:—"हे देव! यह आप नहीं जानते? समग्र संसारको कष्ट देनेके लिये स्वयं तुमने महा आपत्ति रूप इष्टजन वियोगिका नामकी मेरेको नियुक्तकी है। यथा तैसेही तीनों लोकोंके सामर्थ्यको हरानेवाले नरेंद्र और देवेन्द्रको अपने वशीभूत रखनेवाले, महायोद्धोंका राजा, अकस्मात् सब जगह उपद्रव करनेवाला और तुम्हारी कृपासे सदैव आबाल वृद्ध सारे जगत्के जन्तुओंमें प्रसिद्ध, ऐसा यह मरण नामका नपुंसक है। इसका पराक्रम तुम जानतेहीहो मैं अधिक क्या कहूँ? तुम्हारे बन्धु कर्मपरिणाम राजाने उस संसारी जीवको कनकपुरमें रहनेवाले अमरसेठ के घर लेजाकर नंदा के गर्भमें उत्पन्न किया, उस बातको तो छः महिने होगये हैं। मैं तुम्हारे मनका अभिप्राय जानकर उसी क्षण वहां जाकर इस मरणकी सहायता की। पहिले उसके पिताको मारा और उसका जन्म होतेही उसकी माता और दूसरे कुटुम्बी जनोंको इस मरण महासुभटने क्षणभरमें मारडाले।- फिर फिर उन विचारोंका इस तरीके नाश किया की पीछे से

उसके कुलका नाम तक न रहा। वहां से उसको एकेन्द्रियादिकमें डाला। वहां फिरता २ वार २ अनन्त पुद्गल परावर्त्त तक बहता रहा। इसप्रकार यह बड़ा कार्य्य हम दोनोंने किया। इसलिये यह मिथ्या दर्शनकी असत्य वचन चतुराई सुनकर हमको हँसना आया"। इसप्रकार सुनकर मोहराजा खुश होकर खुद सैनाके सन्मुख बोला:—"अहो! सैनिकों यह नपुंसक कितना बड़ा साहसो है"? यह सुनकर मरण बोला:— हे स्वामिन्! ऐसा न कहो। क्योंकि यह सब आपहाही प्रभाव है. कहा है कि:—

> सिद्ध्यन्तिमंदमतयोपि यदत्र कार्ये,
> संभावना गुण मवेहितमी श्वराणाम्।
> भिद्यात्सपं गुरुरूगोपि कथं तमांसि,
> सूर्यो रथस्य धुरितं यदि नोऽकरिष्यत्॥ १॥

"इसकाममें जो मंदमतिवाले पारंगत होते हैं वे उनके नेताओंकाही प्रभाव समझते हैं। क्योंकि जो अगर सूर्य्य अरुणको खुदका सारथी न बनाया होता तो वह अकेला इतने घने अन्धकारको किस तरहसे नाश

कर सकते? एक डाली से दूसरी डालीपर कूदने जितनी शक्तीवाले बन्दरको समुद्र तैरजानेकी जो शक्ती प्रगटी वह सिर्फ रामचन्द्रजीकाही प्रभाव था।

इसप्रकार मोहराजा सुनकर बोला :—"हे वत्स? अबसे सब आपत्तिमें सहायता करनेके लिये तुझकोही नियत करता हूं। इसलिये तुझे अब सब तरहसे खबर रखना पड़ेगी, मनुष्यगतिमें आये हुए कुटको किसी भी जगह ठहरने नहीं देना चाहिए इस तरहसे जल्दी उसका मूलसेही निकंदन कर डालना चाहिए कि जिससे वह धर्मका एक अक्षरभी न जानने पावे और उसको उलटे मुंह निकाल डालना"। मोहराजाके ऐसे वचन सुनकर "हे स्वामिन् तुम्हारा आदेश यथार्थ है। यों कह कर मरणादिक सब खड़े हो गये। फिर कुछ समय एकेन्द्रियादिकमें रखे बाद कर्म परिणामने उसको लेकर किसी कुटला स्त्रीके गर्भमें मनुष्यगतिमें डाला। वहां तेज औषधियोंके पान करनेसे बड़े कष्टसे मरणगति को प्राप्त हो गर्भमेंही गल गया। फिर वहां से पूर्ववत् बक-

एकेन्द्रियादि में पीछा गया और वहां अनन्त काल तक
फिरा। फिर कर्मपरिणाम बड़ेकष्ट से उसको पहिलेगर्भ
वाली स्त्रीके गर्भमें लाया। वहां वह योनियन्त्र से पीड़ा
रहित हो बड़ी वेदना से बाहर आया। वहां जन्म लेतेही
मरणने माता सहित उसका नाश किया और फि
पूर्ववत् एकेन्द्रियादिक में फिराकर, अनन्त काल तक
बांधरखा। इसप्रकार किसीसमय एकवर्ष का होकर, कि
सी समय दोवर्ष, किसीसमय तीनवर्षका होते हुए जव
नी में पहुँचने के पहिलेही, बाल्यावस्था में ही, धर्माक्ष
की प्राप्ति के विना, सर्वापत्ति रूप परिवार सहित, मर
ने उसका अनेक समय संहार करके बार २ उसको ए
केन्द्रियादिक में डाला और अनन्त पुद्गल परावर्त्त त
क फिराया।

इस मनुष्यक्षेत्र में श्रीनिलय नाम का नगर है। व
धनतिलक नामका सेठ की धनवती नामकी स्त्रीके ग
में एकसमय कर्मपरिणाम राजा उस संसारी जीवको ल
या। यह खबर मिलतेही मोहराजा ने भयभीत होक

यह बात अपने मिथ्यादर्शन नाम के मंत्री को कही। वह पलभर नीची नजर कर, मौन धर फिर कुछ शिर धुनाकर हुँकारा करता हुआ बोलाः- "अहो! अब इस सेठका कुछ विशेष करके अपने योग्य हो जाएगा। जो यदि प्रतिपक्षके सैनिकोंने अब किसी तरह उसको छेड़ा नहीं तो हम उसको सामान्य रीतिसेही अपने वशीभूत करलेंगे। जोभी अभी विशेषता से अपने ओर उसका चलण नहीं हुआ, तोभी तुमको इस सम्बन्ध में किसीप्रकार की शंका नहीं करनी चाहिए। अपनी दृष्टि में आनेके बाद वह विचारा कहीं भी जानेका नहीं। थोड़ेही समय में उसको पकड़कर उलटे पाँव लौटाकर अपना सन्देशा आपको भेजेंगे"। इसप्रकार प्रतिज्ञा करके संसारी जीवके स्थान को बराबर जानकर मिथ्यादर्शन मंत्री मोहराजा के पाससे आज्ञा लेकर अपने स्थान को गया। वहां बाये हाथ पर गाल रखकर बहुत देरतक चिन्ता में सोचता हुआ बैठारहा। उसको चिंतित देखकर उसकी कुदृष्टि नामकी स्त्री बोलीः- "हे आर्यपुत्र जगत् में असाधारण सौभाग्यकी भूमिरूप ऐसी कौनसी कन्या अन्य

है ? जिनके लिये देवांगना को भी अभिलाषा रखने योग्य तुमको इतनी बड़ी चिन्ता होरही है" उसने कहा कि:- "हेप्रिये ! इससमय इस प्रकार हँसी करना तेरे को योग्य नहीं क्योंकि तेरे सिवाय स्वप्न में भी किसी प्रकार दूसरी सुन्दरी को मेरे अन्तःकरण में जगह देता नहीं हूँ। यह चिन्ता तो दूसरे कामकी है"। यह सुनकर कुदृष्टि एकदम कटाक्षपात करके बोली:- "हे स्वमिन् ? ऐसा कौनसा कार्य है कि जिसमें लीला मात्र से तीन लोकों को वश करने वाले तुम जैसे आर्य्यपुत्र का मन दुःखी होगया। अगर मेरे कहने योग्य होतो कहो" इतने में वहबोला:- "हे सुलोचने ! इतने समयतक तेरे को न कहने योग्य मैने क्या बाकी रक्खा ? क्योंकि मेरे घर सब महत्व के कार्यों की चिंता करने वाली तू है। इसलिये यह बात तू भी सुन" कर्मपरिणाम राजाने चारित्रधर्मकी सहायता से निर्माण किये हुए संसारी जीव को अभी श्रीनिलय नगरवासी धनतिलक सेठ के घर जन्मदिया है। उसको धर्म न प्राप्त करने देने की मैने स्वामी से प्रतीज्ञा की है वह तेरे सुनने में आई होगी। वहबोली:-

"हां, वह मेरे मनने में आई" इतने में मिथ्यादर्शन ने कहा कि:- "हे कमलवदने। यह बहुत कठिन काम है। क्योंकि कर्मपरिणाम दूसरे पक्षमें मिलगया है तथा उस सेठ के कुल में हमारी सत्ता बराबर अभी तक जमी नहीं। हे प्रिये! ज्यादे क्या कहूँ। हमारी सत्तामें के कुल को फसाने में दूसरे पक्षवाला निपुण है। और उसमें सवों से तेज सम्यग्दर्शन तो अपना कट्टर शत्रु है। उसके, इन्द्र से सेवा कराने लायक, चक्रधर के भी प्रार्थना योग्य, देवता और मुनियों के मनमें बसी हुई, राजाओं के मनको वशमें करने वाली, महाविद्वानों की अभिलाषिणी, ध्यानियों को ध्येय और परम सौभाग्यरूप अमृत की नदीसमान, समस्तधर्मबुद्धि नामकी पुत्री है। प्राणियों को अपने वशमें करने के लिये कर्म परिणाम राजा पहिले उसी को भेजता है। इसको देखकर कितनेक प्राणीतो हमारे होते हुए भी, हमारे स्वामी के भक्त होते हुए और हमारे चरणों में हमेशा रहते हुए भी तुरन्त उसके आने पर मोहित हो जाते हैं। और दूसरे कामों को बन्द करदेते हैं और बड़े कुल में

पैदा हुई ऐसी और सौभाग्यसमन्विता दूसरी कन्याओं-को छोड़ते हैं । हमारा उपदेश उनपर असर नहीं कर-ता और अपने कुटुम्ब को सर्वथा छोड़कर पागल की तरह उसके पीछे २ फिरते रहते हैं और उसके सम्य-ग्दर्शन पिता को ही मानदेते हैं और हमारे मोह स्वामी का तिरस्कार करते हैं, सर्वथा इसके ही वश हो जाते हैं, उसही पर आसक्त होकर हमको तो एक दुश्मन समझते हैं और हमारे सारे पक्षवालोंको जड़से ही उखाड़ डा-लने जैसा मथन करते हैं । हे प्रिये ! इसप्रकार हमारे पक्षको क्षय करती हुई उसको देखकर मेरे मन में हमेशा चिन्ता बढ़ती रहती है ।" इतना सुनकर कुछ अज्ञान व-श मुस्कराकर कुदृष्टि बोली.- "हे आर्य्यपुत्र ! शरद ऋतु के चन्द्रमा की चाँदनी युक्त पूर्णिमा की रात्री में दूरसे आकड़े के पत्ते को देखकर सिंह के कर्ण की कल्पना करके जैसे बनिया डरजाता है। वैसेही आपकी यह स्थिति है । इसमें जो अगर तुमको शङ्का होती हो तो मैं उसका समाधान करतीहूँ कि 'कर्मपरिणाम दूसरे पक्ष में चलागया है' ऐसा तुम्हारा कहना यद्यपि सत्य है तो-

भी यह बलवान् जिस २ पक्षमें मिलता है वहां स्वामीपन अपनाही रखते हैं। इसलिये ये एक समय अपनों को मिलते हैं और दूसरी वक्त उनमें जा मिलते हैं। 'इस से भय है'। ऐसी जो तुम्हारे मनमें शङ्का आती हो तो-भी वह यथार्थ नहीं क्योंकि बहुत वक्त तो वह अपने साथही मिलता है। वह अपनों में बहुत निबिड़ है। और उनके साथ दाक्षिण्य मात्र ही से वर्ताव करता है ; अपना तो वह स्वजाति जैसा है। वैरी के पक्ष से उसका इतना ज्यादे परिचय नहीं है। इससंसारी जीवको बार २ फिराकर इतनी वख्त तुमने उसको तकलीफ पहुँचाई यह सब कर्मपरिणाम के बीचमें होनेसे हुआ है। इसके बिना तुमसे कभी उसका नाश नहीं हो सकताथा इससे दूसरा कोई उसका इष्ट नहीं करसकता, उसने तुमको कहाः– "हमारी सत्ता नीचे रहनेवालों को फिरादेने में दूसरे पक्षवाले बलवान है" इसबात को सुनने से मुझको हँसी आती है। क्योंकि वह चतुर अनादि काल-से एक निगोद में रहने वाले अनन्ता जीवों को अपने वश में नहीं करसका, केवल उनका अनन्तमा हिस्साही

वप में करपाया, वाकी तो तीनों जगत् के अनन्त जीवों का समूह तुम्हारा ही दासत्व करते हैं। और संसार की रंग भूमि में वह हमेशा नाटक करता है तो कहिये सच्चा निपुण कोन है? तुमको निर्भय हो कर रहना चाहिये। और तुमने कहाकि 'उसकी कन्या इन्द्रको भी सेवनीय है' सो यहतो भयङ्कर चोर के दर्शन से भयभीत होकर भ्रमित मनसे घोड़े पर सवार हुआ वहुत कायर पुरुप जिसतरह घोड़ों को भूलजाता है। उसी तरह हे-प्रियतमः! तुम तुम्हारा खुदका भान भूलगये हो। ऐसा मुझको मालूम होता है क्योंकि अपने उसकेही सदृश अधर्मबुद्धि नामकी कन्या है। और वह उसकी कन्या से अनन्त गुणा सौभाग्यवन्त पुरुषों कोही वल्लभ है। उसके पाँव के पाना से दवाये हुए तीनों लोक प्रायः हमेशा उसकी सेवामेंही हाजिर रहते हैं। उस सम्यग्दर्शन की कन्या तो मेरी पुत्री के भय से डरकर चुपचाप कियां करती है। अपनी पुत्रीसे दवाये हुए वहुत वकवादी और दुर्विदग्ध ऐसे कितनेक गिने गिनाए मनुष्यही उसका आश्रय लेते हैं। इसलिये उस विचारी गरीव वालिका

भी यह बलवान जिस २ पक्षमें मिलता है वहां स्वामीपन अपनाही रखते हैं। इसलिये ये एक समय अपनों को मिलते हैं और दूसरी वक्त उनमें जा मिलते हैं। 'इस से भय है'। ऐसी जो तुम्हारे मनमें शङ्का आती हो तो-भी वह यथार्थ नहीं क्योंकि बहुत वक्त तो वह अपने साथही मिलता है। वह अपनों में बहुत निबिड है। और उनके साथ दाक्षिण्य मात्र ही से वर्ताव करता है। अपना तो वह स्वजाति जैसा है। वैरी के पक्ष से उसका इतना ज्यादे परिचय नहीं है। इससंसारी जीवको बार २ फिराकर इतनी वखत तुमने उसको तकलीफ पहुँचाई यह सब कर्मपरिणाम के बीचमें होनेसे हुआ है। इसके विना तुमसे कभी उसका नाश नहीं हो सकताथा इससे दूसरा कोई उसका इष्ट नहीं करसकता, उसने तुमको कहाः– "हमारी सत्ता नीचे रहनेवालों को फिरादेने में दूसरे पक्षवाले बलवान है" इसबात को सुनने से मुझको हँसी आती है। क्योंकि वह चतुर अनादि काल-से एक निगोद में रहने वाले अनन्ता जीवों को अपने वश में नहीं करसका, केवल उनका अनन्तमा हिस्साही

वप में करपाया, बाकी तो तीनों जगत् के अनन्त जीवों का समूह तुम्हारा ही दासत्व करते हैं। और संसार की रंग भूमि में वह हमेशा नाटक करता है तो कहिये सच्चा निपुण कौन है ? तुमको निर्भय हो कर रहना चाहिये। और तुमने कहाकि 'उसकी कन्या इन्द्रको भी सेवनीय है' सो यहतो भयङ्कर चोर के दर्शन से भयभीत होकर भ्रमित मनसे घोड़े पर सवार हुआ बहुत कायर पुरुष जिसतरह घोड़ों को भूलजाता है। उसी तरह हे-प्रियतमः ! तुम तुम्हारा खुदका भान भूलगये हो। ऐसा मुझको मालूम होता है क्योंकि अपने उसकेही सदृश अधर्मबुद्धि नामकी कन्या है। और वह उसकी कन्या से अनन्त गुणा सौभाग्यवन्त पुरुषों कोही वल्लभ है। उसके पाँव के पाना से दबाये हुऐ तीनों लोक प्रायः हमेशा उसकी सेवामेंही हाजिर रहते हैं। उस सम्यग्दर्शन की कन्या तो मेरी पुत्री के भय से डरकर चुपचाप किया करती है। अपनी पुत्रीसे दबाये हुऐ बहुत वकवादी और दुर्विदग्ध ऐसे कितनेक गिने गिनाए मनुष्यही उसका आश्रय लेते हैं। इसलिये उस विचारी गरीब बालिका

का मेरे सामने क्यों वर्णन करते हो ? ज्यादे क्या कहूँ तुम वहां चलो और जो तुम बहुत डरते होतो मेरे को ही वहां भेजो कि जिससे उसको तुम्हारी लड़की की दासी बनाकर और गला पकड़कर यहां तुम्हारे पास लाकर हाजिर करूं। पहिले कईवक्त उसका अनुभव करने से उस विचारी को मै अछी तरह से जानती हूँ। हे प्रियतमः ! इस प्रकार खुदकी बड़ाई बताकर बोलना यह उन स्त्रियों का काम है जो लायक नहीं हों। क्यों कि स्त्रिया नम्रता से, अल्प भाषण से और लज्जा से ही शौभती हैं। ऐसी धृष्टता तो उसकी दूषण रूप गिनी जाती है तथापि विशेश कारण होने से ही में ऐसे वचन बोली हूँ। इस लिये कृपा कर यह मेरा अपराध क्षमा कीजिये"। इस प्रकार का भाषण सुनकर मिथ्यादर्शन जरा हँस कर बोला कि:– "हे प्रिये ! मोहराजः को स्त्रीयों से अधिक प्रीति होने के कारण उनको ऐसे बोलने में लज्जा संभव नहीं। हे कांते ! तूने ठीक ही कहा है। इसलिये तूही वहां जा और वहां अपने राजा को जीसप्रकार जीतहो वैसा कर" वहबोली:– "हे प्रणेश !

ऐसा मत कहो, तुम्हारे उदय में ही हमारी प्रसन्नता है तुम्हारे विना हम किस गिनती में हैं! इसलिये तुमको हमारे साथ वहांही आना पड़ेगा" यह सुनकर मिथ्यादर्शन साथ जाना स्वीकार कर बोलाः- "हे भद्रे हमें अलग रहकर कभी भी कोई काम नहीं करना चाहिये, यही ठीक है। इसलिये में वहां आकर तटस्थ होकर देखा करूंगा" इसप्रकार कहकर मिथ्यादर्शन अपनी पुत्री तथा स्त्रीके साथ वहांगया और उसके पीछे मोहराजाने व्यसन, धनपिपासा और लभान्तराय आदि सब आपत्तियों को भी भेजा।

अब श्रीनिलय नगरमें धनतिलक की स्त्रीने पुत्रको जन्म दिया, तबश्रेष्ठी ने वर्धापन महोत्सव करके वैश्रमण नाम रखा धीरे २ पुत्र बड़ाहुआ और सम्पूर्ण कला ओंको सीखी, जोहींवह जवान हुआ त्योंही धनपिपासाने अपना अवसर जान, हर्ष पूर्वक उसका आलिङ्गन किया। इससे वह हर्षावेश में आया फिर धनपिपासा के साथ खेलने को रसिक, ऐसे उसको उसने कहा, हे भद्र!

जोतुम मेरी कृपा सम्पादन करना चाहते हो तो द्रव्यप्राप्त करने के अनेक उपाय करो। तुम रत्न, सुवर्ण और वस्त्रादिक बेचने की दुकान लगाओ। सुपारी, गंध, धान्य, कपास, कुली, लोहा और लाख आदि का व्यापार करो और वणिक पुत्रों को अन्यदेशों में भेजो। बहुत प्रकार का करियाणा को भरके गाडियें दूर २ भेजो। बैलों तथा ऊँटो को खरीदकर दूसरे मुल्कों को भेजो, गधों की तलाश करो, कीमती करियाणों को जहाजों में भरकर सामुद्रिकमार्ग से भेजो। तोते, मैना आदि पक्षीओं को खरीदो, धातूनियों का अभ्यास करो, खानें खुदवाओ, रसादीक संग्रह करने का यत्न करो और बनावटी करियाणा बनाने की कोशीस करो." इस प्रकार उसके एक साथ लाखों उपदेश सुन कर ऊँचा स्वांस लेकर वह बोलाः—

"हे तन्वंगी! तूने मेरे को अच्छा उपदेश किया। क्योंकि इतना परिश्रम करे बिना घरमें रत्नों के ढेर इकट्ठे नहीं होसकते तथा सोने के ढेर लगते नहीं"। इस प्रकार

कह कर प्रथम बाजार में जाकर उसने सोनेका लेन देन शुरू किया। इतने में लाभान्तराय ने अपना दाव जान कर उस वैश्रमण को जा पकड़ा। उसके प्रभाव से उसको एक फूटी कौड़ी का भी लाभ होना कठिन होगया। इस से वह विचारने लगाः– "अहो! आजतो बाजार का भाड़ा भी पैदा नहीं हुआ"। भाड़े की प्राप्ति होतेही उसने विचार किया किः- "अहो! आजतो नोकरों के वेतन जितनी भी प्राप्ति नहीं हुई" उसकी प्राप्ति होतेही उसने याद किया किः- "घरके खर्च इतना भी लाभ नहीं हुआ उसका लाभ होतेही, भोगोपभोगादि की आशङ्का करता हुआ और खर्च कियेहुए धन से क्या २ प्राप्ति होती इसकी ज्यादे २ अभिलाषा होने से उसका द्रव्य मूल में से कुछ कम होने लगा। धन की पिपासा से आर्त्तध्यान करता हुआ वह इधर उधर झांकने लगा। इतने में एक विक्षिप्त उद्भ्रांतनेत्र वाला कोई पुरुष जल्दीसे उसके पास आया और उसको एकान्त में लेजाकर मस्तक और कठांदिक के गहनों की बड़ी गठरी बतलाई, इससे उसने शरीर के इशारे से ये जानते हुए कि यह चौरी का माल

है। इसको कोन जानता है सब लेलूं, आगे जो होना होगा सो होगा, इस प्रकार धनपिपासा से अपने मनमें विचार करते हुए थोड़े मोलमें सब माल लेलिया, उसके जातेही तुरन्त पीछे से राज पुरुष आये उन्होंने धन माल सहित उस वणिक पुत्र को बांध कर आगे किया और लकड़ी से मारते हुए, कृपाण वगेरह शस्त्रों से निर्दयतासे कूटते हुए और रास्ते में सब लोगों से निन्दा करते हुए उसको राजदरबार में लेगये। वहां राजा से इस प्रकार निवेदन कियाः– "हे प्रभो! आपके जेवर इसने लिये हैं" इसपर से राजाने उसको मारने की आज्ञादी। फिर उसके पिताने महाजन एकत्रित करके राजासे प्रार्थना की। महाजनों के अनुरोध से राजाने उसको छोड़दिया। फिर धनपिपासा से प्रेरित होकर नगर में वह बहुत पापयुक्त व्यौपार करने लगा। परन्तु अंतराय ने उसके बड़े लाभको सब जगह अटका दिया। उससे धीरे २ बड़ी आपतीयों से पी . ा पानेलगा।

एक समय धन पिपासाने उससे देशान्तर जाने की

प्रार्थना की इस लिये मा-बाप को छोड़ कर, बहुत किरियाणोंसे गाड़ियों को भरकर देशान्तर चला, मार्ग में एक स्थान पर विश्राम किया। वहां सब साथियों को तृषा लगी, खोज करने से किसी भी जयह पानी नहीं मिला इसलिये जलकी आशा छोड़कर सब आँखें बन्दकरके मूर्च्छित होकर पड़ेरहे, इतने में वहा चोरों का झुंड आया और उनको मूर्च्छित देखकर उनका सारा धन माल हरणकर लेगया। इतने में वहा कोई मुसाफिर आया, देखकर उसको दया आई, उसने कहींसे थोड़ा सा पानी लाकर उनको पिलाया— इससे सब सचेत हुए फिर उनको उसने जलाशय का रास्ता बताया— इससे सब वहां जाकर मज्जनादि करके जल पीकर शान्त हुए और आगे चलनेलगे, परन्तु शंखल वगैरह के अभाव से सब अपने ठिकाने चले गये, वैश्रमण एक गांव के पास आपहूँचा, वह क्षुधातुर होकर एक पेड़ की छाँयां में मूर्च्छित होकर पड़रहा। वहां किसो दयालु पुरुष ने उसको देखा और उसको कुच्छ चाँवल वगैरह खिलाकर शान्त किया। फिर आगे जाने से वह बहुत थका, पैदल

चलने से बहुत असमर्थ होगया और कोमलता के कारण पैदल चलने से पाँव फटकर खून की धारा निकलने लगी। इससे उसे वारम्वार मूर्च्छा आनेलगी। उस मार्ग के श्रम से पृथ्वीपर लोटता, पड़ता, दुखित होता, आक्रन्द करता, शोक और विलाप करनेलगा। धन और कुटुम्ब के वियोग से हृदय में दुःखी होता हुआ दीनता से अति कङ्गाल होकर, दीन चेष्टा करनेलगा। फिर बड़ी मुश्किल से प्रत्येक गांव में भिक्षा के लिये भटकनेलगा परन्तु बड़ा निर्दय और अति क्रूर अन्तराय उसके लाभ को अटकानेलगा।

इस प्रकार पाँव २ पर आनेवाली बड़ी आपत्तियों से व्याकुल होताहुआ, बड़े कष्ट से समुद्र के किसी किनारे जा पहुँचा। यह विचार करके कि "यह कोई वणिक पुत्र है" एक श्रेष्ठी उसको अपने साथ लेगई। वहां उसकी मदद से कुछ उसको धन की प्राप्ति हुई। इससे फिर धन पिपासा की प्रेरणा से व्यापार शुरु किया, इससे उसको बहुत धन मिला। एक समय उसने कहीं इस प्रकार श्लोक सुनाः—

इक्षु क्षेत्रं समुद्रश्च, योनिपोषणमेवच ।
प्रसादो भू भुजां चैव, सद्योघ्नति दरिद्रताम् ॥

इक्षु-क्षेत्र, समुद्र, योनिपोषण और राजप्रसाद ये दरिद्रता का नाश करनेवाले, हैं इससे उसको धनपिपासा ने ज्यादे उत्साहित किया, इसलिये किरियाणे के जहाज भर कर सामुद्रिक मार्ग से चला, वहां बीच में जातेही आकाश में घनमण्डल फैला, बादल और समुद्र से लेकर आकाश तक गुंजने वाली गर्जना होनी लगी, बिजलियां चारों तरफ चमकने लगी, और हवा सन्मुख दिशा से बहनेलगी, इससे बहुत ऊंची २ लहरे उठने से उसके जहाज के सैंकड़ों टुकड़े होगये। वहां वैश्रमण के हाथ में एक जहाज का पाटिया आजाने से वह जलचर जन्तुओं का और लहरों की चोटों से दुःख का अनुभव करता हुआ, समुद्र की लहरों की श्रेणी से घसीटता हुआ, एक दूर देश में 'जहां उसका नाम नहीं जानाजाय और अपने मित्र तथा रिश्तेदारों के समाचार तक नहीं मिल सके' जा निकला, वहां कष्ट के भार से दबा हुआ

फोड़े आदि बीमारियों से कष्ट पानेलगा। उसके प्रभाव से उसको ज्वर होगया, शिरदर्द शुरूहोगया, शूल रूप शल्य से और अन्य रोगों से पीड़ित होनेलगा। वहां निर्जन देवालय में सोता, वृक्षो के निचे बैठता, मठो में फिरता, धर्मशालाओं में अक्रन्द करता, घर २ फिरता, दीन वचन बोलता, पाचक औषधि आदि मांगता और सब जगह लाभांतराय से निराश होता हुआ वह बहुत समय तक दुःखी रहा। आखिर बड़ी कठिनाई से रोग मुक्त हुआ फिर धन पिपासा से प्रेरित होकर वह व्यौ-पार कर बहुत वक्त कष्ट सहन करने परभी वह थोड़ासा द्रव्य प्राप्त कर सका। इतने में फिर कहीं राजाओं से दण्डित हुआ, किसी वक्त धूर्तों से ठगाया, किसी समय चोरों से लुटाया, कहीं अग्नि से सताया गया, इस प्रकार कष्ट सहता अनेक देशों की यात्रा करताहुआ वह किसी समय धातु फुकने का काम करता, न खाने योग्य खाता और अनाचार सेवता, किसी जगह खाने खोदता, वहां शिला और उपल आदि से प्रतिघात सहता, किसी जगह सर्प और बिच्छू के डंक मारने से कष्ट सहता इस

प्रकार वह बड़े कष्ट सहन करनेलगा।

इस प्रकार हरसमय पड़ीहुई आपत्तियों से कष्ट सहता, धन, स्वजन, देश और स्त्रीसे अलग होकर अत्यन्त दुःखसे ग्राम, नगरादिकमें भटकता २ एक समय किसी मठ में गया वहां किसी धर्म शास्त्र वांचनेवाले के मुखसे उसने यह श्लोक सुना–

"स्वजन धन भवन यौवन-वनितातन्वाद्यनित्यमिदम खिलम्
ज्ञात्वापत्त्राणसमं, धर्मं शरण भजतरे लोकाः" ॥ १ ॥

"स्वजन, धन, घर, यौवन, वनिता, और बन्धु अनित्य है, इसलिये केवल धर्म कोही आपत्ति से रक्षण करने वाला समझ कर, हे भव्यजनो! उसका शरण लो" यह श्लोक सुनकर उसने विचार कियाः- "अहो ? दुःखी प्राणी जहां जिसके पास जाकर अपना दुःख निवेदन करता है वे सब इसी प्रकार कहते हैं कि "तुमने पूर्व जन्म में धर्माराधन नहीं किया इसलिये धर्म रहित अशरण प्राणीयों को पाँव २ पर कठिन दुःख भुगतने

पड़ते हैं तो सचमुच दुःख से व्याप्त इस संसारमें केवल धर्मही शरण देनेवाला है दूसरा कोई शरण देने-वाला नहीं है' इस प्रकार वह विचार करता है, इतने में मिथ्यादर्शन की कुदृष्टि नाम की स्त्री ने विचारकिया। "अहो! आज दीर्घकाल के पश्चात् मेरे को समय मिला है क्योंकि अभी दूसरे पक्षवालों का वैराग्य नाम का मनुष्य के साथ इसकी सङ्गति हुई मालूम होती है इसके पीछेही हमारा रास्ता रोकनेवाली सम्यग्दर्शन की पुत्री किसी तरह आजावेगी तो सारी बाजी बिगड़ जावेगी"। इस प्रकार विचार करके उसने अब धर्मबुद्धि नामकी अपनी पुत्री को उसके पास भेजदी वह वैश्रमण के पास गई इसके प्रभाव से उसको धर्मकर्म करने की मति उत्पन्न हुई। फिर उसने विचार किया कि "जो सारे सुजन पुरुषों के एक ही अभीप्राय हैं तो सब अभीष्टार्थ को सिद्ध करने वाला ऐसे धर्म का आराधनही प्रथम क्यों न करना चाहिये? जड़ही जिसकी सद्भाव होगा तो कार्य स्वयम्ही सिद्धहोगा। इसलिये अपने देशमें जाकर अपने माता पिता का दर्शन करूं वहां जाने बाद

अवश्यही धर्मकाही आरधन करूंगा" इस प्रकार वह निश्चय करके समुद्र किनारे गया। वहां नौकर होकर किसी जहाज में चड़ा और सामने के किनारे जापहुँचा फिर बड़ेकष्टसे स्थलमार्ग से अपने देश पहुँचा।

अब वह श्रीनिलयनगरमें आया उस समय उसके मातापिता मरगयेथे बन्धु आदि किसी दूसरी जगह चलेगये थे। घर पुराना होगयाथा, हवेली गिरगई थी और सब वैभव नष्टहोगए थे। इस प्रकार की स्थिति देखकर वह बहुत दुःखीहुआ, बहुत विलाप किया, अपनी आत्मा को वारंवार निन्दनेलगा। फिर मनमें धर्मबुद्धि लाकर के बड़े कष्टसे आत्मा को समझाकर उसने पिता की उत्तर क्रिया की।

इतने समयमें चारित्र धर्म वगैरह सबोंने इकट्ठे होकर मतबोध मंत्री को कर्मपरिणाम के पास भेजा उसने वहां जाकर प्रार्थना की कि "हे महाराज! यह एक संसारी जीव आपका सहायक है, आपने पहिले कबूल किया है परन्तु आपकी इस बात को अब तक

अनन्त पुद्‌गल परावर्त्त होगये परन्तु तोभी वह हमारे प्रसंग में आताही नहीं सो क्याकारणहै। क्योंकि: बड़े पुरुषों के वचन युगों तक अन्यथा नहीं होते" इस प्रकार सुनकर कर्मराजा ने भृकुटी चड़ाकर मुंहऊपर करके कहाः- "हे वत्स ! वह व्यतीकर कैसे बनता है तू जोभी उसको जानता नहीं है तोभी मैं तो तुम्हारे सामने लाकर रखता हूँ; परन्तु मेरे बन्धु लोग, बहुत उक्ताकर उस बिचारे को, बार २ पीछा फिरा कर घुमाते हैं तो इस गृह विरोध में मेरा क्या उपाय चले? मुझ अकेले से कुछ भी नहीं हो सकता, भावी स्वभाव लोक स्थिति, उद्यम, काल और नियति आदि की यहां जरूरत है. उनके साथ विचार कर अवसर पाकर तुम्हारा मन इच्छित कार्य्य सब सिद्ध करूंगा मेरा वचन नहीं भूलाहूँ" इस प्रकार सुनकर सतबोध बोला- "अभी बराबर धर्म बुद्धि उसके पास गई है, ऐसा सुनने में आता है तो हमारा वहां जानेका समय क्यों नहीं आया" ? इस प्रकार कर्मराजा सुनकर अपने स्वभाव नाम के मंत्री के हाथ पर ताली देकर जोरसे हँसकर बोलाः- "अहो ? वह धर्म

बुद्धि जरूर! देखो यह सद्बोध क्या कहता है? वह महा पापबुद्धि ही सिर्फ हिंसारूप है सिर्फ वह नाम से ही अपना धर्म बुद्धिपना बताकर नामसे ही सदृशता में घुमनेवाला विचारे सारे जगत् को ठगती है। जिस धर्म्मबुद्धि को तूं सम्यग्दर्शन की पुत्री करके जानता है, वह तो दूसरी ही है। क्योंकि वहतो प्राणियों के लिये अमृतकीवृष्टिके समान है और तुम्हारे अभ्युदय का हेतुहै यहतो उनको कुपथ्य औषधि और महा कालकूट विष की लता के समान है; और तुम्हारा जड़से ही नाश करने वाली है। जगत् में ऐसे पदार्थ हैं जो नाम के विपरीत स्वभाववाले होते हैं। हमेशा नाश करनेवाला विष और जीवन देनेवाली औषधि विशेष इन दोनों का विष ऐसे नाम हैं। धतुरे के पत्ते और नागरवेल के पत्ते इन दोनों का नाम 'पत्ते' सदृशही है, कांसी के, शीशे के, ताँबे के, चाँदी के और सोने वगेरह के बने हुए रुपये का नाम 'रुपया' सरीखाही है दही, दूध, घी, सरसोंका तेल, कुरंज का तेल और अनार आदि के रस की 'रस' ऐसी संज्ञा समान है, मगर इन पदार्थों का स्वभाव अलग २ है वह हिंसा हमारे भाई के मंत्री की लड़की होने से उसके सम्बन्ध में ऐसा

बोलना हमको उचित नहीं है, लेकिन शत्रु और मित्र को यथार्थ कहने में हमको कुछ हानि नहीं है" इस प्रकार सुनकर स्वभाव नाम के मंत्री ने कहा- "हे देव ! ऐसा कहने से क्या ? हमेशा अनुभव करते हुए लोक उसकी सर्व चेष्टा नहीं जानतेहों ऐसा नहीं है" फिर शिर घुमाकर कर्मपरिणाम राजा बोला- "अहो ! इसने सच्चा कहा.क्योंकि यह खुद सद्बोध है, इसलिये इससे क्या अज्ञात है। यह सब जानता है मगर यह जवान और धूर्त होने से हमको बड़े पुरुष बनाकर ठगता है" तब दोनो कानोंपर हाथ रखकर सद्बोध बोलाः- "अहो ! तुम ऐसे न कहो यह सब तुम्हारी ही कृपा है। अब हम जाते हैं हमारे लायक कुछ काम काज होतो फरमाओ" कर्म राजा ने कहा- "ऐसा ही करूंगा, तुम जाओ रास्ते में तुमको कुशलता प्राप्त हो" फिर चारित्र धर्म के पास आकर सब वृतान्त कहाः—

अब माता पिता की मृत्यु के दुःख से दुःखित वैश्रमण को कुदृष्टिकी पुत्रीने विशेषतासे धर्म करने का

निश्चय कराया और उस नगर में रहने वाले स्वयंभू नाम के त्रिदंडि के मठ में उसको खिचकर लेगई। वहां उसको धर्म सुनवाया और नित्य वहां आने की प्रतिज्ञा कराई, वहां वार २ आने से उसकी इच्छा इतनी बढ़ गई की उसने उसके पास से दीक्षा लेली, फिर त्रिदंडि ने अपने आचार की शिक्षा दी, इससे वह शौचवाद करने लगा, नदी आदि में दिन में तिन वार स्नान करने लगा और तांबे के बर्तन और लंगोट आदि उपकरणों को वार २ धोने लगा, जब उसके गुरु मृत्यु को प्राप्त हुए, तब उनकी जगह उसको स्थापन किया। हमेशा उनके मार्ग का ही उपदेश देता, सत्मार्ग को दुषित करता और सद्धर्मचारियों पर द्वेष रखता, हमेशा अपने आत्मा को बड़ा मानने लगा; इस प्रकार कुधर्मबुद्धि के वशमें हो व मठ आदि में बहुत आशक्त होकर वह मृत्यु को प्राप्त हुआ फिर, अकेन्द्रियादिक में गया और वहां अनन्त पुद्गल परावर्त्त तक वार २ फिरा। अपनी पुत्री के कार्य्य को देखकर कुदृष्टि उसपर प्रसन्न होकर उसने अपने स्वामी मिथ्यादर्शन को सन्तुष्ट किया, उसने

मोहराजा को यह बात सुनाकर बहुत प्रसन्न किया।

फिर बड़े कष्ट से कर्मपरिणाम राजा उसको मनुष्य गति में ले आया, वहां ब्रह्मदत्त नाम के ब्राह्मण का सोमदत्त नामका पुत्र हुआ। वहां मोहराजा की भेजी हुई अपनी पुत्री, उसका पति और अपने कुग्रहादि परिजन के सहायता से आगे होकर कुदृष्टि उसके पास की पास रही। वहां पर उसने यज्ञ आरम्भ करनेमें उत्साह दिलाया, पशु वध में इच्छा कराई, उसको मांस खिलाया, हल, लोह, तल, नमक, कपास, अश्व, बैल भूमी और शस्त्रादिक सम्बन्धी व्यौपार महारंभ में उसको पेरा, अन्य की कन्याओं का व्याह करने में उसकी प्रेरणा की। इस प्रकार धर्म के छल से बहुतसा पाप कराकर उसको नरक में डाला, वहां से एकेन्द्रियादिक में लेजाकर और वहां अटका कर, अनन्त पुद्गल परावर्त्त तक उसको फिराया। इस तरह से अन्य २ बोध मत आदि का उपासक बनाकर और वहां धर्म के बहाने से बहुत पाप कराकर, कुटुम्ब सहित मिथ्यादर्शन मंत्री ने उस विचारे के बार २

पीछा फिराकर एकेन्द्रियादिक में डाला और वहां अनन्त पुद्गल परावर्त्त तक फिराया।

एक समय मनुष्य क्षेत्र में सौभाग्यपुर नाम के नगर में सुन्दर गृहस्थ के घर वरुण नामका पुत्र उत्पन हुआ देखकर कर्मपरिणाम ने विचार कियाः- "अबतो इसे किसी प्रकार चारित्र धर्म के पास लेजाना चाहिये, परन्तु सिर्फ नामही की धर्मबुद्धि महापापिणी जहांतक इससे दूर नहीं होवे वहां तक ऐसा होना अशक्य है, इसका तिरस्कार तो सम्यगदर्शन की कन्या शुद्धबुद्धि का इसको स्वीकार हो तोही होसक्ता है। जो उन दोनों की विशेषता इसको जानने में आवेतोही यह स्वयं उसका स्वीकार करलेगा। उसकी विशेषता तो शुद्धसिद्धांत श्रुति नामकी दूति के कथन सेही वह समझसकता है और उस दूती का आना तो सदागमन के पासही संभव है और वह सदागमन हमेशा सद्गुरु के पासही रहता है, इससे इसको सद्गुरु के पास लेजानेसेही काम पार पड़ेगा"।

इस प्रकार कर्मपरिणाम का गूढार्थ समझकर मोहराजा भयभीत हुआ रागकेसरी थरराया, द्वेषगजेन्द्र डोलायमान होनेलगा और उसका सारा कुटुम्ब वज्रसे हत प्राय: होगया फिर उसके मंत्रीवर्ग एकत्रित हुए सर्व सामन्त आये, उन सबों ने मिलकर मोहराजा को कहा कि:- "हे देव ! आप तीनों लोकों को क्षोभातुर करनेवाले हो, आपको इतना बड़ा रंज किसका हुआ" ? इस प्रश्नसे दीर्घ श्वास डालकर वह बोला:- "तुम्हारा कथन सर्वत्र सच्चा है। मेरा एक छोटासा लड़का इन्द्रादि तक को क्षोभातुर करसक्ता है मेरे परिवार को कोई दुःख देनेको सामर्थ नहीं है। परन्तु क्या कियाजाय ? हम इस कुटिल गृह विरोध से बिलकुल कन्टालगये हैं." इस प्रकार सुनकर वह बोला:- "हे देव ! कर्मपरिणाम के साथ कोई नई खटपट हुई है क्या" ? तब मोहराजा ने कहा:- "सचमुच यह नया तो कुछ नहीं, तुम जानते ही हो, वह संसारी जीवसम्बन्धमेंही व्यतीकर हमको दुःख देनेवाला है, उसके पास किसी सदगुरूने हमारा वैरी सदागम को लाने का प्रयत्न किया है, ऐसा सुननेमें आया है वह हमको

जड़सेही नाश करेगा वह हमारे कुल को दावानल की ज्वाला समान श्रुतिदूतिका को उसके पास भेजनेवाले हैं," इस प्रकार सुनकर उन्होंने हुंकार किया और सब बोले,"जो इस प्रकार होते तुमको किसी तरह दुःख नहीं मानना चाहिये, हमको अब इस प्रकार की रचना करना चाहिये, जिससे अपने ऊपर आफत लानेवाले सदगुरु वहां आही नहीं सके" इस प्रकार उनके वचनों से कुछ आश्वासन प्राप्त कर मोहमहिपति बोलाः- "हे वत्सो ! तुम ऐसीही तजवीज करो जिससे मैरे मनोरथ पूर्ण हो। फिर उनके सब सैनिक संसारी जीव के पास गए, और उसके साथ मिलकर बराबर बिचार कर गुरु को उसके पास आतेही अपशकुन बताये शिष्य को पढ़ाने वगैराह कार्य्य संबंधी अनेक प्रपञ्च खड़ेकिये, शिरपीड़ाआदि रोगों को पैदाकिये बीच २ में राज विरोध वगैराह विघ्नों को उत्पन्न किया, ऐसे विघ्नों को बताकर उनके मुनि पास आनेहीनहींदिया तब कुदृष्टि की पुत्री के वचन से धर्म के भिन्न अनेक महा पाप करते हुए बड़ी आपत्ति में आगिराया तब मरण ने मौका पाकर उसका नाश

किया वहां से पीछा मोहराजा उसको एकेन्द्रियादि में लेगया और वहां अनन्त काल तक उसको बांध रखा, फिर कर्मपरिणाम उसको मनुष्य क्षेत्र में विमलपुर नाम के नगर में रमण शेठ के घर सुमित्र नाम के पुत्र रूप उत्पन्न किया और वह क्रमसे यौवन अवस्थाको प्राप्त हुआ।

एक समय मोहसैन्य से स्खलित अन्तरवाले संयम् श्री से भेट किये हुए, प्रशमालंकार से सुशोभित, प्रतापि, संपत्तिवान्, ब्रह्मचारी, सद्गुणी, शुद्ध चारित्र में अचल दर्शन में दृढ़, बुद्धिमान् तथा श्रुतज्ञान में निष्ठावाले गुण जलधी नामके आचार्य्य को बहुशालक नामके बाग में कर्मपरिणाम लेआया, वह हकिकेत जानकर सुनने के लिये अति उत्कण्ठित राजा अपने मंत्री व श्रेष्ठी सामवंत् वगैरा के उन मुनिके पास गये, ज्योंही सुमित्र जाने को तैयार हुआ त्योंही इस बातको सुन मोहराजा बोलाः-'अरे? इस संसारी जीव को पकड़ो, नहीं तो अपन सबोंका नाश हुआ ही चाहता है। यह कहकर तुरंत उठकर अपने सुभटों को उसको अटकाने के लिये भेजे। उसने इस प्रकार

रचना कर पहिले आलस को उसके शरीर में प्रवेश कराया, गृहकुटम्ब आदि से मोह उत्पन्न कराया, इस प्रकार की अवज्ञा उत्पन्न कर जाति वगैरा से मदोन्मत्त किया, क्रोध को बढ़ाया, प्रमाद को उत्सुक किया कृपणता बढ़ाई, नरकादि का भय छुड़ाया, शोक को हाजिर किया, कुदृष्टि के उपदेश से प्राप्त होनेवाला ज्ञान ज्यादे प्रगटाया, घर, हवेली, कृषीकर्म, वगैरा विषयों की चपलता जाग्रत की। नट, नाटक वगैरा का शोक बढ़ाया द्यूत क्रिड़ा को शुरू की इत्यादि सुभट बहुत हल्ला करते हुए वहां गये और प्रतिदिन हर एक सुभट ने उसको पकड़ कर अटका रखा और गुरु के पास नहीं जाने दिया। फिर गुरु दूसरी जगह विहार कर गये, धीरे २ सुमित्र यमका अतिथी हुआ और फिर पहिले के माफिक एकेन्द्रियादिक में बहुत काल तक फिरा, फिर कर्मपरिणाम उसको मनुष्य गति में ले आया और बड़े कष्ट से उसके पास सदगुरु और सदागमको लाया परंतु आलस्यादि के कारण वह विचारा पहिले के मुवाफिक श्रुति सङ्ग न पासका कुदृष्टि और उसकी पुत्री

ने उसको फिर मारकर एकेन्द्रियादिक में बहुत समय तक फिराया, इस प्रकार अनन्तवार हुआ ।

एक समय उज्जैन में गंगादत्त नाम के गृहस्थ के यहां सिंधुदत्त नाम का पुत्र उस संसारी जीवको कर्मपरिणाम ने उत्पन्न किया, और उसकी यौवन अवस्था आनेपर कर्मपरिणाम उस प्रदेश में सद्गुरु और सदागम को ले आया और बलात्कार से आलस्यादिक का नाश करके सदगुरु और सदागम के पास उसको लेआया यह वृतान्त जानकर मोहराजा चिंता रूप महासागर में मग्न होकर बोलाः- "अहो ! मंत्री और सांमंतो, यम्मन में जीतनी हवाथी वह सब निकल गई। इसलिये उस वैरी के पास किसकोभेजू ? क्योंकि उसको श्रुतिसंगम हुआ है" इस प्रकार सुनकर ज्ञानावरण नाम का मंत्री खड़ाहोकर बोलाः- "हे देव ! इस प्रकार कायरता मतवताओ, क्योंकि आपके सैन्य बहुत है अभी तो समुद्र में से एक भी विन्दु नहीं गया, अभी तो मेरी पुत्री शून्यता का वहां बहुत मौका है उसको श्रुति सङ्ग होते हुए भी मेरी

पुत्री के वहां पहुँचतेही वह निष्फल होजावेगा। इसलिये इसको आज्ञाहो" मोहमहिपति ने तुरन्त उसको आज्ञा दी, आज्ञापातेही वह वहां गई। सिंधुदत्त को सद्‌गुरू और सदागम के समागम से श्रुति ने उसको साफ २ मिथ्यादर्शन, कुदृष्टि और उसकी पुत्री के दोष बताये, सम्यग्दर्शन और उसकी पुत्री के गुण वर्णन किये मोहका भेद सब कहदिया, उसकी सैना की सब चेष्टा कही और चारित्र धर्म की कृपा से संपत्ति का वर्णन किया उसने ही चारित्र धर्म राजा की सैन्य के समागम से उत्पन्न हुआ सुख का सन्देशा कहा परंतु शून्यता के आने से उसका भाषितार्थ तो दूर रहा मगर 'मैं कौन, यह कौन? और यह क्याख्यात कही गई यह सब उसके समझमें नहीं आया। फिर पर्षदा उठी तो किसी ने पूछाः- 'हे भद्र! तेने क्या सुना? उसने कहा, 'मैं कुछ नहीं जानता, उसके बाद फिर किसी दिन मित्रादिक के आग्रह से वह गुरु के पास गया वहां श्रुति सङ्ग हुआ, परंतु शून्यता के प्रभाव से उसके हृदय में इस तरह से कुछ नहीं रहा जैसे चालनी में पानी नहीं ठहरता, इससे

गुरू और सदागम दूसरी जगह चलेगये। उसके बाद धर्मबुद्धि सिन्धुदत्त को भागवत आदि अन्य दर्शनीओं के समागम में लेजानेलगी जिस समय सुन्दता उसका साथ छोड़देतीथीं उस समय वह उसका सब कथन सुनता और उसके मुआफिक करता था। इस प्रकार महान पाप में एक चित होने से उसको वहां से फिर उठाकर एकेन्द्रियादिक में लेजाकर अनन्त काल बांध कर फिराया।

एक समय कर्म राजा ने विचार किया "अहो यह विचारा किसी प्रकार चारित्र धर्म की सैना में जा नहीं सक्ता क्योंकि मेरे बांधव यद्यपि बलवान है और उनको निर्बल करने का उपाय यद्यपि मेरे ध्यान में है, तौभी उसके करने से उनके शरीर को बड़ा नुकसान पहुँचता है और वह मेरे शरीर से अलग नहीं है। इसलिये उनके शरीर का नाश होने से मेरे शरीर का नाश होता है, इसलिये अब मेरेको क्या करना चाहिये? अथवा स्वि-कृत निवाहने से जो होने वालाहो वह भलेही हो। इस

प्रकार चिन्ता करने से क्या? कहा है कि:—

"देहेपि जनितदाहं, सिंधुर्वडवानलं शशीशशकम्!
नत्यजति कलंक करं, प्रतिपन्न पराहि सत्पुरुषाः" ॥ १ ॥

"अपने को जलाकर शोषण करने वाली वडवानल को समुद्र कभी छोड़ता नहीं है और अपने कलंक रूप होने पर कभी चन्द्रमा मृग को नहीं छोड़ता है"। क्योंकि सत्पुरुष स्विकृत किये हुए का पालन करनेवाले होते हैं। सहसात्कार से उपकार करने वाले गुणीजन अपने नुकसान का खयाल तक नहीं करते हैं। क्योंकि दीपक की बत्ती अपने को जलाकर भी दूसरों को प्रकाश देती है। जो भी चारित्र धर्म वगैरा मेरा क्षय करने का यत्न करते हैं, तो भी ऐसा खयाल कभी नहीं करना चाहिये कि ये मेरा परम शत्रु है, सो उनपर उपकार करने से क्या? क्योंकि उपकारी अथवा मत्स रहित लोगों पर दयाकी दृष्टि रखने से क्या विशेपता है? परन्तु शत्रुओं के हजारों अपराध सहनकर उनपर दयालुता रखना बहुत उत्तम बात है। इस पर किसी ने कहा है कि:—

"अपास्य लक्ष्मी हरणोत्थवैरता-मचिंतयित्वा च तदद्रिमर्दम्
ददौ निवासं हरये महार्णवो, विमत्सरा धीरधियां हिवृत्तयः॥१।

"लक्ष्मीका हरण होनेसे जाग्रत हुए। वैरों को अलग करके तथा पर्वत से किये हुए मर्दन को हृदय में नहीं लाकर, समुद्र ने विष्णु को अपनेमें स्थानदिया है"। सच-मुच धीर पुरुषों की वृत्ती मत्सरहित होतीहै। इससे चारित्र धर्म आदि मेरे शुभ विभाग का सदैव पोषण करतेरहते हैं और मेरे स्वरूपको विस्तार पूर्वक जानते हैं। उन्होने ही मुझको लोगोंमें प्रसिद्ध किया है और लोगों में मेरी प्रसिद्धि करते हैं नहींतो मेरा नाम कोई नहीं जानता। क्या इस जगत में प्रसिद्धिके चाहने वाले कमती हैं? जो दूसरों कि भी प्रसिद्धि सहन नहीं कर सकते। कहाहै कि:-

'तमसाऽनिशं शशांको, गमनं न त्यजति खिद्यमानोपि।
एतावती प्रसिद्धिर्यस्मादन्यत्र गमनकृताम्" ॥ १॥

"अधंकारसे हमेशा पराजय पानेपर भी चन्द्र अपने गमन को छोड़ता नहीं है। जिससे दूसरी जगह गमन

करने वालोंकी इतनी ज्यादे प्रसिद्धि देखनेमें आती है" इत्यादि विचार करके, कर्म महाराजा ने एक समय उस संसारी जीव को, विजयवर्धन नाम के नगर में सुलस श्रेष्ठी के घर पुत्रपने उत्पन्न किया। उसका नंदन ऐसा नाम रखा, वह यौवन अवस्था को प्राप्त हुआ इतने में कर्मपरिणाम अवसर पाकर चुपके से उसके पास आकर यथा प्रवृत्तिकरण नाम की तलवार उसको दी। और कानमें कहा कि:- "इस तलवार से आत्मशत्रु मोहराजा को कुछ न्यूनसत्तरमो भाग छोडकर कुछ अधिक गुणत्तर भाग देह को इस तीक्षण खड्गसे टुकड़े करदेना। तथा ज्ञानावरणीय दर्शनावरणीय, वेदनीय, और अंतराय इन सामंतो को भी कुछ न्यून एकतीसवां भाग बादकर बाकीका कुछ ज्यादे ओगणीस भाग शरीर का खण्डन करना। इस तरह नाम और गोत्र इन दोनों शत्रुओं का कुछ इकीसवां भाग रखकर बाकी कुछ अधिक शरीर का ओगणीस विभागों को छेदडाल्ना। इस प्रकार खण्डित करके उनका आधा पतन करने से उनकी सारी सैना का खण्डन होकर आधा पतन होजावेगा फिर

तू निराकुल होकर समग्र सुख का कारणभूत ऐसा सम्यग्दर्शन नाम के मंत्री के घर का द्वार देख सकेगा। वह द्वार निविड़ ऐसा राग द्वेष की परिणतिरूप ग्रंथि के कपाट से बंधा रहता है उसके उखाड़ने का उपाय तेरे को बाद में कहूँगा अभी तो मैं जितना बताता हूँ उतना हि करना"।

नन्दकुमार ने उसी प्रकार सबकाम किया। इस प्रकार यथा प्रवृत्तिकरणने ऊपर कहे मुवाफिक सातों कर्मों की स्थिति घटाई। इससे ये नगर के दर्वाजे के पास रहने वाला कर्म भूपति सहस्त्राभवन नाम के बाग में सद्गुरू और सदागम को लेआया। फिर उनकेपास नन्दन को लेगया और उसके सहायक तरीके उसकी सचेत क्रिया दिलाई, जिससे उसकी शून्यता नष्ट होगई।

इससे उस समय मोहराजा को मूर्छा आगई, ज्ञाना-वरणीआदि सामंत रुदन करनेलगे, नाम और गोत्र आक्रन्द करने लगे और रागकेसरी, प्रमुख आदि सब

सैना में विलाप होनेलगा। उस समय मिथ्यादर्शन आत्मा को शांतकर और कुछ हिम्मतकर खड़ाहुआ, उस अवस्था को पहुँचोहुई सारी सैना को उसने देखा, उससे वह महादुष्ट शिरसे पाँव तक ईर्षा से भरपूर होकर अश्रद्धा नामका चूर्ण लेकर दौड़ाहुआ नंदन के पास गया। उस समय सद्गुरु और सदागमन ने विशुद्ध श्रुति के मुख से मोह और मिथ्यादर्शनादिक के म। दोष उसको कहे, चारित्रधर्म और सम्यग्दर्शनादिक के अनेक गुण कह बताये, धर्म के फलरूप स्वर्ग और मोक्ष समझाया और पाप का फलरूप नरकादिक बताया। इसके दक्षता के प्रभावसे नंदन ने यह सब समझलिया। इतनेमें तुरन्त मिथ्यादर्शन ने अश्रद्धान नामका महादुष्ट चूर्ण उसको देदिया, उससे असर होतेही नंदन ने विचार किया:- "अहो! मिथ्यादर्शनादिक कहां है ? और चारित्र धर्म तथा सम्यग्दर्शनादिक कहां हैं ? पापसे नर्क की प्राप्ति होती है, ऐसा किसने देखा और धर्म करके स्वर्ग और मोक्ष में जाकर कौन पीछा आया है ? सचमुच इसकी विचित्र चरचा महासाहसको बनादेनेवाली है"

इत्यादि विचार करके अपने पास रहनेवालों को धीरे २ अपने विचार प्रगट करनेलगा और वार २ ताली देकर गुरू की हँसी करनेलगा, इससे कर्मपरिणाम उसपर अत्यन्त रुष्ट हुआ और मोहादिक संतुष्ट हुए, फिर वह पुष्ट होकर सांगोपांग शरीरवाले होगये। याने सातों कर्म की स्थिति उत्कृष्ट थी उतनी पुष्ट होगई, फिर क्रोधित होकर उन्होंने नन्दन को पकड़कर सम्यग्दर्शन महामात्य के भवनद्वार के सामनेसे हटादिया और हजारों पाप कराये, आखिर फिर एकेन्द्रियादिकमें उसको लेगये और वहां अनन्त कालतक बांध रखा।

इस तरह किसी समय नरकमें, किसी समय संज्ञि पंचेन्द्रियतिर्यंच तथा मनुष्यमें और किसी समय देवगति में, पहिले ही के माफिक मोहादिक को खण्डित करके यथोक्त स्वरूपवाला सम्यग्दर्शन मंत्री के भवनद्वार के आगे वह आखिरी समयपर आया, तब कहीं अश्रद्धानसे कहीं रागादिक के वश से, कहीं क्रोधादिसे और कहीं विषय वृद्धि वगैरा से महापाप इकट्ठा कराकर उन्होंने

उसे द्वार में प्रवेश नहीं करनेदिया। फिर सांगोपांग हुआ, मोहादिकने पहिलेकी तरह उसे पीछाफेरा और हरेकसमय एकेन्द्रियादिकमें उसको अनन्तकालतक अटकारखा।

इस मनुष्य क्षेत्रमें एक मलयपुर नामका नगरहै, वहां इन्द्र नामका राजा और उसकी विजय नामकी स्त्रीहै। एक समय कर्मपरिणामने उस संसारी जीवको उनके पुत्र रूप पैदा किया और उसका नाम विश्वसेन रखा। वह वहां बड़ाहुआ और सब कलाकौशल सीखा और वह युवा स्त्रीयों के मनको मोहित करने योग्य जवान हुआ। फिर एक समय राजकुमारों के साथ अशोकसुन्दर नाम के बाग में क्रिड़ा करने के लिये गया, वहां कर्मपरिणाम ने उसको फिर सद्गुरू और सदागम बताये, उनके दर्शन हीसे विशिष्टतर वीर्य उल्लसित होकर कर्मराजा के पास से प्राप्त की हुई तलवार ज्यादे तीखी बनाकर मोहादिक शत्रुओं को पहिले से ज्यादे छेदन करके राजकुमार अपने परिवार सहित सदगुरू और सदागम के पास गया और विनय पुर्वक नमस्कार करके बैठा, गुरुने सदागम

से कह कर श्रुतिसंगम कराया, उन्होंने कानके पास आकर इस प्रकार उसके कानमें कहाः-"हे भद्र! तेरे को दुष्ट मोहराजा के मिथ्यादर्शन मन्त्री ने ठगकर के भव सागर में फिराया, उस दुष्ट ने अपनी कुदृष्टि नामकी स्त्री के साथ अपनी पुत्री को धर्मबुद्धि नाम बनाकर तेरे पास भेजी है। परंतु सचमुचमें वह महापाप बुद्धि है तीनो जगत में घूमकर विचारे गरीब प्राणियों को अपने वशीभूत कर धर्म के बहाने उनसे बड़े २ पाप कराकर घोर नर्कमें डालती है, वहही अपने मिथ्याद-र्शन पिता की और कुदृष्टि नाम की माता की उनके पास से बहुत सेवा कराती है, वे दोनो इन प्राणीयों को क्या दशा करते हैं? उनका तेरे सामने कितना वर्णन किया जाय। रागादि दोषरहित और केवल गुण रूप देव में अदेव बुद्धि और हमेशा द्वेषभाव पैदा कराती है। वेही दोनो दुष्ट निःस्पृह और दयालु ऐसे गुरू में सदा अगुरू बुद्धि कराती है इतनाही नहीं परंतु दया, दान, क्षमा, शील, ध्यान और ज्ञानादिक की बुद्धि को निर्गुणी में स्थापन करती है। अर्थात निर्गुणी को गुणी बनाती है।

सत्धर्म में हमेशा द्वेष कराती है और जीव हिंसारूप अधर्म में अत्यन्त पक्षपात कराती है। इससे जीव विपरीत बुद्धि-वाला होकर बहुत पाप एकत्र करता है और उसके परीणाम में इतना दु ख सहता है कि जिसका वर्णन नहीं कियाजासकता, हे भद्र! इन सब मोहादिक वैरियोंने मि-लकर तेरी इतने समय तक बहुत कदर्थतना की, उनमें दुष्ट बुद्धिवाला, दुरंत और दुःख को देनेवाला, मिथ्यादर्शन मंत्रीतो सकुटम्ब तेरा वनिष्ट वैरी है। तेरे को उसकी स्त्री और लड़की ने जितने दुःख दिये उनका वर्णन तो हजार मुखवाला भी करनहींसकता''।

इस प्रकार श्रुतिका कथन सुनकर, राजकुमार भय भीत हो फिर शान्त होकर, गुरुको प्रणाम करके गद् ग कण्ठ से इस प्रकार कहने लगाः—"हे प्रभो! पहिले तो इतना समय मेरा योंही गया क्योंकि मैं अज्ञानता के कारण कुछभी नहीं समझसका, इसलिये अब शरण रहित और उन शत्रुओंके निर्अंकुशतासे दुःख पात्र कियाहुआ अब मेरेको शरण कौन दे" फिर सद्गुरुकी

प्रेरणा से श्रुति ने पुनः कहाः-"भद्र! मेने यह बात तेरे को अनेकवार निवेदन की. परन्तु किसी समय शून्यतासे किसी समय अश्रद्धान से, कभी द्वेषसे, कहीं मोहसे, कहीं शठतासे, और किसी समय मदसे, कुदृष्टि की पुत्री में अत्यन्त रागान्ध होनेसे, तेने सब काम व्यर्थ किया! अब आत्माको शान्त रखकर, खास तेरे हित चिंतक वाक्य सुन" फिर वह हाथजोड़कर लक्षपूर्वक सुननेलगा, इससे श्रुति कहने लगी।

"यहां सद्गुणों, अमृतका सागर और राज्यका महाभार जिसने संपादन किया है। ऐसा चारित्रधर्म नामका राजा है, उसके सम्यग्दर्शन नामका सच्चा मंत्री, सदागम नामका भाई और सब जन्तुओंका हित करनेवाला ऐसा सद्बोध नामका एक बड़ा भाई है। उसके नाम मात्र से उसका अद्भुत पराक्रम का स्मरण करनेसे मोहराजाकी अशेष सैन्य छिन्नपत्र की तरह कांपती है। विशेष करके वैर रखनेवाला मिथ्या दर्शन का तो कुटुम्ब सहित उन्हो ने अनेक समय चूर करडाला वह सद्बोध धर्मका पक्का

है। मोक्षवृक्षकी जड़ है और सब गुण रूप भूमिको पीठ पर धारणकरनेमें शेषनाग के समान है। इस जगत्में इस सरीखी कोई समृद्धि नहीं है। ऐसा कोई सुख और स्थान नहीं है जो सम्यक प्रकार का आश्रय चाहनेवाले और संतुष्ट हुऐ प्राणीको दे नहीं सके। उसके रूप सोभाग्यादिक गुणोंकी खानी अपने पर्मार्थ नामसे जगत में प्रसिद्धि पाई हुई, धर्मबुद्धि नाम की लड़की है, जो मन में उसका ध्यान करतेही उसी क्षण प्राणीयोको सुख देतीहै जो प्राणी उसका भजन करते हैं, उसको उसके बताने से सम्यग्दर्शन मंत्री रूप महात्मा को जो देखसकता है और उनके दर्शन होतेही मोह शत्रु की सैना से दुःख पायेहुए प्राणीयों को हमेशा शरण मिलती है। परन्तु जो प्राणी उसकी पुत्री के साथ सम्बन्ध नहीं रखते उन को शरण तो मिलना दूरही मगर वे उनके दर्शन तक नहीं करसकते इसलिये हे सुन्दर! तेरी जो इच्छा हो वह सब उसके साथ मिलतेही पूर्ण होजाएगी, मैं पहिले उसके दर्शन कराताहूँ जिससे तेरेको शान्तता मिले" इस प्रकार सुनकर वह भव्यजीव बोलाः-"मै तैय्यारहूँ इसलिये

मेरेपर कृपाकरके जल्दी उनके दर्शन कराओ" उसकी उत्सुकता देखकर और उसमें विशेष योग्यता आई हुई समझकर, सद्गुरु ने सदागम और श्रुति के मुखसे फिर मोह महाचरट, मिथ्यादर्शन कुदृष्टि और कुधर्मबुद्धि वगैरा के दुर्गुणों का सविस्तार वर्णन करके शुद्धधर्म करने की बुद्धि उत्पन की, फिर सन्वेग युक्त होकर वह भव्य जीव बोला ।

"हे भगवन् ! आपके कहेहुए सदागम की कृपासे मेरे को धर्मबुद्धि प्राप्तहुई । उसकी प्राप्ती से मैं विचार करताहूँ कि आपके कहेहुए धर्मकाही मैं आचरण करूं कुदृष्टि, कुधर्मबुद्धि वगैरा का मैं साथ छोड़दूँ, इसलिये कृपाकरके आपके बताएहुए धर्म करनेकी विधि बतलाइये" गुरूने कहा:- "हे भद्र ! इस धर्मबुद्धि में जो तेरा स्थिर अनुराग हुआ है, वहही अनुराग धर्म विधान का उपाय विधि हमको कहने के लिये उत्साही करता है । सुन ! शुद्धधर्म करने की इच्छावालेने पहिले ही दूसरे सबोंका त्याग करके सम्यक मन, वचन, और काया

से सम्यग्दर्शन मंत्री को स्वामी स्वीकारना चाहिये और उसको कलुषिता न लगे उसतरह सब प्रकार से संभाल करना चाहिये। उसका सम्यक् तरहसे आराधन करनेसे वह इस तरह से प्रसन्न होजाता है कि उसके उत्तरोत्तर सब प्रकार के गुणोंकी प्राप्ति होती है" इस प्रकार सुन कर राजपुत्रने विचार किया कि:- "अहो! सम्यग्दर्शन कोई महाप्रभाविक पुरुष है, इसका नाम कैसा सुन्दर है। मुझको किस तरह इसको देखना और पहिचानना चाहिये। इस प्रकार राजपुत्र विचार करता है। इतनेमें 'यह समय ठीक है' ऐसा समझकर कर्मभूपालने उसको विशुद्धतर अध्यवसायरूप अपूर्वकरण नामका मजबूत और तेज कुल्हाड़ा दिया और कान में चुपके से कुछ कहा, इससे उत्साहपूर्वक अपूर्व वीर्यविशेष की प्राप्ति हुई। उस कुल्हाड़े से बलात्कार निविड़ रागद्वेष की परिणतिरूप ग्रंथि नामका महाप्रतोली के दोनों किवाड़ों को तोड़कर प्रति समय मोहादिक शुत्रओंका निर्दयता से नाश करताहुआ, राजकुमार सम्यग्दर्शन बड़े मंत्रीका शरद ऋतुके चन्द्रमा के प्रकाश के समान सफेद अंतःकरण

नाम का बड़े महल के आँगन में आपहुँचा। अपनी प्रतिज्ञा को निबाहने से सन्तुष्ट होकर, कर्मराजाने विशुद्धतम अध्यवसायरूप अनिवृत्तिकरण नामका वज्र दण्ड दिया। उस वज्रदण्डसे मोहराजा के पुत्र द्वेषगजेन्द्र के अनन्तानुबंधी क्रोध और मान नाम के दोनों पुत्रों का तथा मोहांगज, रागकेसरी की अनन्तानुबंधी माया नाम की कन्या तथा अनन्तानुबंधी लोभ नामका पुत्र और मिथ्यादर्शन दुष्ट मंत्री इन पांचों महाशत्रुओं को अत्यन्त इर्षा करके और दुष्टता लाकर किसी तरह पीछा नहीं छोड़नेवाले ऐसे विश्वसेन कुमारने नष्ट करदिया। जिससे चिक्कार करतेहुए वे पांचों कुछ जीवत रहने से भगकर चित्तवृत्ति नामकी महा अटवी में आकर मूर्च्छित हो शिथील होगये।

फिर किसी प्रकारकी रुकावट नहीं रहने के कारण, राजकुमार ने सम्यग्दर्शन के अन्तकरण नामके गृह में प्रवेश किया और वहां सम्यक्त्व का रूप धारण करनेवाले सम्यग्दर्शन महामंत्री को देखा। फिर पुष्करावर्त्त

मेघकी वृष्टि से दवदग्ध वृक्ष के समान, अमृतसे सिंचन करनेवाले, सुजनवचन के प्रबन्ध से दुर्गों के दुर्वचनो को सहन करनेवाले साधुकी तरह, द्रव्य का बहुत लोभ के कारण जन्मभर महादरिद्री के समान, वसंत ऋतु के कारण शिशिर का वर्फ गिरनेसे दग्धहुआ कमलखण्ड के समान, अकस्मात प्राप्त हुआ प्रिय सङ्गम से बहुत समय से वियोगी होकर और उससे संतप्त हुई विरहिणी स्त्री के समान, अनादि काल के विरुद्ध ऐसे मोहादिक शत्रुओं से उत्पन्न किये हुए दुःखोंमें दग्ध होगये हैं, ऐसा वह अमृत प्रवाह के सदृश उनके दर्शन से अत्यन्त शान्त होगया। फिर पूर्व कथित फिर पूछने से उन गुरू महाराजने उस सम्यग्दर्शन का वृत्तान्त विस्तार पूर्वक कहदिया और उसको वार २ उत्तेजित किया तथा उस राज कुमार को इस प्रकार शिक्षा दी।

"हे भद्र! यावज्जीवितपर्यंत यह ही मेरे स्वामी हैं, दूसरा कोई नहीं" यह प्रतिज्ञा करले, जीससे देवता भी चलायमान नहीं करसकते, इसतरह तेरे को दृढता

रखनी चाहिये, कभी प्राण जाते होतो भी दृढ़ता नहीं छोड़ना, शङ्काकांक्षा, विचिकित्सा, पाखंडी परिचय, झूंटी प्रशंसा, पिण्डप्रदान, और प्रपादान आदि भेद, और लान्छन लगाने वाले हैं। इससे आत्महितैषीने उनका दूरसेही त्याग करना योग्य है। नहीं तो थोड़ाही कलुषित होतेही फिर पहिले के समान मोहादिक बलिष्ट हो जायंगे और उससे सब अपकारों को संभाल के अत्यन्त क्रोधित होकर दाँत पीसते हुए तेरा गला पकड़कर खींचजायंगे, निःशंक होकर तेरको अपने वशमें कर फिर क्रूर होकर अधिक दुःख देंगे। इसलिये हे वत्स ! इन दुष्ट लोगों को मौकाही नहीं देना चाहिये, अर्थात वह नहीं आसके ऐसा सावचेत रहना चाहिये, फिर सम्यक् तरहसे आराधन करनेसे सम्यग्दर्शन मंत्री मौकेपर तेरी योग्यता जानकर, प्रणत जनपर अतिवत्सल और सब सुखों के देनेवाले, चारित्रधर्म महा चक्रवर्ती तेरे को बतावेगा। फिर बहुत आरामसे संतुष्ट होकर वह चारित्रधर्म अपने शरीर से अभिन्न परमप्रिय ऐसा जगत का गौरव तथा बड़े राज्य को देनेवाला, ऐसा प्रवर लक्षणों से

सम्पन्न, सब सुखोंकी खानि व सर्वगुण और लक्ष्मी का भण्डार, ऐसी देशविरति और सर्वविरति नामकी दो पुत्रियाँ तेरेको देगा, वे दोनो निपुण पुरुषों को भी रंजनीय और दुराराध्य है। परन्तु उनके चिन्तको कष्ट कोई नहीं देता मगर उनके सेवन से परम्परा के सुखका अनुभव अवश्य होगा, परम ऐश्वर्यमय, निःसीम ऐसा सुखयुक्त अप्रतिपाति और सकललोक याने त्रैलोक्य के ऊपर रची हुई, ऐसी निवृत्तिपुरी का परमेश्वरत्व मिलेगा। इसप्रकार गुरु के वचन शांततासे सुनकर और स्वीकार कर क्षणभरमें मिथ्यात्व दलीलों का जिसमें सम और उपसम दोनों हैं ऐसे क्षयोपशमिक सम्यक्त्व का सेवक बनकर गुरु के चरण में प्रणामकर परिवार सहित विश्वसेन कुमार मनमें हर्षित होकर अपने स्थानको गया। फिर गुरु कीआज्ञा अनुसार अनुष्ठान करते हुए उस सम्यग्दर्शन की सेवामें हमेशा निर्गमन करने लगा।

एक समय कर्मपरिणाम ने विचार किया कि:-"अहो! इसने अपनी प्रतिज्ञा का पालन किया, जिससे सम्यग्दर्शन

का इसको मिलाप हुआ, इससे अब मैं निश्चित हुआ, अब मेरे बांधव इसपरकभी अतिक्रोधित होंगे तो अर्ध पुद्‌गल परावर्त्त से कुछ कमही संसार में इसे घूमना होगा। इसलिये अबतो उतना समय व्यतीत होने परही, इसको बहुत सहाता देकर, निवृत्तिपुरी के परमेश्वररत्न का लाभ दिलावेंगे!

यहां एक समय विश्वसेन कुमारका पिता मरगया, इससे वह राजा हुआ और राज्य चलाने लगा, एक समय मोहनरेन्द्र का वड़ा पुत्र अपने परिवार को निरानन्द भग्नउत्साह और प्रायः व्यापाररहित ऐसा देखकर, अत्य-न्त क्रोधित होकर, ईर्षा को वहन करते हुए अपना कुदृष्टिराग रूप बनाकर पिता को प्रणाम कर, अपने स्थान से वहार निकला और विश्वसेन राजा के पास आकर छिद्र देखनेलगा, राजाने सम्यक्त्व अङ्गीकार किया है। यह सुनकर एक दिन विश्वभूतिका त्रिदण्डी पूर्व परिचित होने से अमर्ष लाकर अनेक दुष्ट विद्या के मंत्र जप दूसरों को सिखानेवाला और जो कालकूट कपटमें

बहुत कुशल है, ऐसा वह उस नगर के बागमें आपहुँचा। उसके अज्ञान तपस्या और विद्या मंत्र आदि कपट से आक्षिप्त होकर नगर के सब लोग वहां आनेलगे, परन्तु सम्यक्त्व मालिन्य के डरसे राजा एकभी समय उसके पास नहीं गया। इससे त्रिदण्डी ने किसीके साथ राजा को कहलाया कि:- "क्यों इतना घनिष्ठ परिचय का अन्त ही आगया, जिससे एक भी समय तुमसे दर्शन नहीं हो सकते? क्या तुमको इससे कुछ नुकसान होगा"? फिर पहिले के परिचय और उसके आग्रह से उसके पास गया। उसने महा व्याक्षेप करने वाले ऐसे विद्यामंत्र के अनेक कौतुक बताये। उस समय कुदृष्टिराग अपना मौका जानकर राजा के अन्तःकरण में दाखिल हुआ और उसके सङ्गति से त्रिदण्डी ने कुछ उसको रंजित किया, दूसरे दिन जब राजा आया तो अन्य २ अपूर्व तमाशे बताये, राजाको और परिजन को कंकण बांधे, उसकी रक्षाकी और उसको यहांतक विश्वास दिलाया कि जिससे कुदृष्टिराग धारणकरके रागकेसरीसे वह इसतरह से विश्वासी होगया कि सम्यग्दर्शन से विरक्त होकर सब लोगों के

सामने कहने लगाः- "यह श्वेतवस्त्रधारी भिक्षुक कुच्छ भी नहीं जानते हैं और इन त्रिदण्डी भगवन्त के ज्ञान की तो प्रत्यक्ष महिमा दिखती है" इस प्रकार होनेसे सम्यग्दर्शन ने विचार किया "अहो! कुदृष्टिराग, स्नेहराग और विषयराग इन तीनो रूपमेंसे कुदृष्टि राग का रूप धारण करके रागकेसरी यहां प्राप्त हुआ है। और अज्ञान ज्वरतो सचमुच! रोगीयों में जैसे ज्वर, वैसेही सबके लिये दूसरा ज्वर हाजर ही है। इन पापियों की जिस जगह सङ्गति हो वहां कहनाही क्या? जहां इनमें से एकभी हो वहां सब मोह, क्रोध, मान वगैरा चुपके से आजाते हैं। इसलिये अब हमको इनके साथ रहना अच्छा नहीं" इस प्रकार विचार करके तुरंत सम्यग्दर्शन अदृश्य होगया, इतने में उसी क्षण किसी जगह से प्रगट होकर मिथ्यादर्शन प्रवेश हुआ और क्रोधित होकर उसका गला पकड़कर दूसरे २ मंत्र, तंत्र और कूट विद्यादिक में कुशल ऐसेही अज्ञान कष्ट करनेवालों के पास लेगया। इससे फिर धर्म के बहाने से महापाप करते हुए उसको मार कर मोहादिक सब शत्रु मिलकर पहिले की तरह उसको

एकेन्द्रियादि में लेगया और वहां अत्यन्त दुःखीकर उसको अनन्त कालतक बांध रखा।

एक समय फिर कर्मराजा ने उसको मनुष्य क्षेत्र में धनवंत श्रेष्ठी के घर सुभगनाम का पुत्र उत्पन्न किया। वह यूवा अवस्था में आया इतने में फिर सदगुरू और सदागम के समीप लेजाकर क्षायोपशमिक सम्यकत्व रूप-धारी सम्यग्दर्शन का उसने सङ्ग कराया। इससे पहिले के सदृश मिथ्यादर्शनादिक भगगये। फिर कुछ वर्षों तक उसने सम्यग्दर्शन की सेवा की, विवाह होनेपर एक समय उसके पुत्र हुआ। इस मौके को जानकर दूसरे स्नेह राग का रूप धारणकर रागकेसरी ने आकर उस-को घेरलिया। उसके सन्निधान से उसके भाईपर बहुत स्नेह उत्पन हुआ मा-बाप पर असाधारण स्नेह हुआ, बन्धु वर्गपर अधिक प्रीति हुई, बहनो पर बहुत प्रेम हुआ और परिजन पर इतना स्नेह हुआ कि जिससे दूसरे लोगों को आश्चर्य होनेलगा, अरे? ज्यादे क्या कहा जाय? घरके दास्यादिक नोकरों को बाहर से आते

नहीं देखेतो संभ्रान्त होकर पूछता कि 'अमुक' कहां गया ? फिर भूक प्यास आदि की परवाह नहीं करते-हुए उसको जहांतक नहीं पाता शान्ति नहीं होती। पुत्रपर तो इसका इतना स्नेह हुआ कि उसका वर्णन ही नहीं होसकता, पर किञ्चित वर्णन इस प्रकार करके बताते हैं:-बाल्यावस्था से उसको उत्संग में लेकर बहुत आलिङ्गन करता नासिक के मेल से भरे हुए मुहको बार २ चुम्बन करता, उसके लार, मल-मूत्र और मेल से खराब हुए। वस्त्रों को अपने हाथों से धोता। मल वगैरा से शरीर खराब हुए बालक को अपने हाथों से ही स्नान कराता, उसको उठाकर त्रिपथ, चतुष्पथ आदि रास्तों पर फिरता लोगों की हँसी दिल्लगी को ध्यान में न लाते हुए उसकी चेष्टा में मग्नहोकर दिनमें कभी भोजन नहीं करता, उसको सुलाने में व्यग्र होकर रातको बराबर निद्रा नहीं लेता, वह पुत्र कुछ बड़ा हुआ इससे दूसरे सबों का अनादर करके स्निग्ध और मधुर खाद्य पदार्थ और पेय वर्त्तनोंमेंसे लेकर अपने हाथसे खिला-ता पिलाता फिर वह कुछ पढ़नेलगा इससे खुद उसके

साथ जाता और पाठशाला में बैठाता, कदाचित् कभी वह बिमार होजाता तो रात दिन उसके पास बैठा रहता और अनेक वैद्यों को बुलाता, नाना प्रकार के औषधोपचार करता, ज्योतिषी, भूत प्रेत को निकालने वाले (भोपे) और मंत्र-तंत्र के जानने वालों को आदर पूर्वक बुलाता, उनके पास से अनेक डोरे-गण्डे बनाता और जहाँतक वह अच्छा नहीं होता वहां तक दुःखी होकर शोक करता, 'अरे ? अपनों को कुच्छ भी खबर नहीं पड़ती कि इसका क्या होगा' ? उसपर से उत्तारादि करता, खुद लांधण करता और रात दिन बिस्तर पर पड़ा हुआ जागाकरता।

इस प्रकार प्रेम मे मूर्ख बनकर, जवान होनेपर पुत्र का विवाह किया फिर हाट में बैठाकर और खुद उसके पास बैठकर सारी व्योपार विद्या सिखाई। अपने पिता धनदत्त शेठ के मरण से अपने पुत्र को सब उनका डाटाहुआ और छिपायाहुआ धन बताया। और सब गृह कार्य्य उसको सोंपकर आप निवृत्त होगया अर्थात अपने

हाथ में कुछ भी नहीं रखा । इस प्रकार पुत्र के प्रेम में मूर्ख बना हुआ सुभग, देव को बिल्कुल भूल गया। गुरु के दर्शन भी छोड़दिये और उनके हित चिन्तक वचन भी भूलगया पुत्रादिक के मोह से साधर्मिक के बोलने से उसको दुःख होता. शिष्ट जनो के उपदेश में उसको प्रीति नहीं होती, धर्म कथा में उसको रुची नहीं होती और सम्यग्दर्शन का नाम लेतेही उसको दुःख होता। फिर स्नेह राग के रूप धारी रागकेसरी की इस प्रकार चेष्टा जानके सम्यग्दर्शन पहिले के माफिक अदृश्य होगया। इससे अपने कुटुम्ब परिवार सहित मिथ्यादर्शन आया और अपना जोर जमाकर सुभग को घेर लिया।

फिर मोह होकर पुत्र अपनी पूरी सत्ता जमाकर अपनी स्त्री आदि के वचन से एकदम पहिले के सब उपकारों को भूलकर "तुम नित्य हमको उद्वेग कराते हो और सब अनर्थों के मूल हो, मेरे को सुख से बैठने नहीं देते" ऐसे मिथ्या दोष लगाकर अपने पिता सुभग को घरसे निकाल दिया । फिर मिथ्यादर्शन के वशीभूत होकर

सद्धर्म बुद्धि से अलग होकर, घर २ भिक्षा माङ्गता, मन वचन, कायासे, अतिदीन और दुःखी होकर उसने बहुत पाप किये। ऐसे उस सुभग को पहिले माफिक मिथ्यादर्शन एकेन्द्रियादिक में लेगया और वहां बहुत समय तक बाँध रखा। अन्यदा कर्मपरिणामराजा उसको फिर मनुष्य क्षेत्र में लेआया। वहां किसी गृहस्थी का सिंह नामका पुत्र हुआ, फिर सम्यग्दर्शन की सङ्गति हुई और उसने बहुत दिनो तक उसकी सेवाकी, फिर यौवन अवस्था को प्राप्त हुआ उस समय रागकेसरी तीसरे विषयराग का रूप धारण कर उसके अन्तःकरण में प्रवेश हुआ उसके सन्निधान से, मधुर वेणु और रागों से मूर्च्छित होनेलगा, अत्यन्त सुन्दर स्त्रियों के रूप से आसक्त होनेलगा, सुगंध में मस्त होनेलगा, मिठे आदि रस में लुब्ध होनेलगा, और स्त्रीयादिक के कोमल स्पर्श में तन्मय होनेलगा, उसको ललना के लालित्य का पान करने का जो अनुराग होनेलगा उसकी तो वातही क्या कीजाय ? उसका कुछ वर्णन इस प्रकार हैः- कामिनी के कटाक्ष और हाव भाव में मुग्ध होकर अपने माता पिता

को घरसे बाहर निकाल दिये, बहिन आदिका दूरसे ही त्याग करदिया, जो प्राण प्रिय कहे वही सत्य, जो वह करे वही हित दूसरा सब असत्य और अहित जानकर वह केवल एक मृगनयनी के ही शरण में रहा। फिर अपनी कुछ सत्ता जमने पर उसकी स्त्री ने दास्यादिक सब पहिले के परिवार को दूर करके अपने कहे अनुसार चलने वलों को रखा, फिर सब प्रकार से निश्चित होकर वह नित्य सुगंधी जलसे स्नान करने लगी, सुगंधी द्रव्यों का विलेप करने लगी, कीमती वस्त्र पहिनने लगी, प्रति दिन नये २ भूषण पहिनने लगी, जो पसंद हो वह खाने लगी, अपने को ठीक लगे वह दान देने लगी और अपनी इच्छा पूर्वक नटविजनों के साथ क्रीड़ा करनेलगी, तथापि माया गर्भित विनीत वचनों के प्रपञ्च से वह अपने पति का इस प्रकार रंजन करने लगी कि जिससे वह सच्ची सती, पवित्र शीलवती और हित कारक है, ऐसा समझ कर देवता की तरह वह उसको मानने लगा।

एक दिन पति के स्नेह की परिक्षा करने के लिये उस

ललना ने कुछ झूठा दूषण बताकर अपने पाँव की जूती से उसके शिरपर प्रहार किया, तब वह उसके पाँव का मर्दन करताहुआ बोलाः– "हे प्रिय ! मैं समझा कि तेरा कहना कुछ कपट भराहुआ या असत्य नहीं है–इसलिये मैं फिर इसतरह कभी नहीं करूंगा। जो तेरा मेरे पर अत्यन्त प्रेम न होता तो गोशीर्ष चन्दन के रस से भी अति शीतल ऐसे अपने चरण प्रहार तू क्यों करती, कभी नहीं करती" इस प्रकार पतिके वचनों को सुनकर उसने निश्चय किया किः– "यह विचारा मेरा दास है तो फिर मैं स्वेच्छा पूर्वक बाहर क्यों नहीं भ्रमण करूं ? मनमाने पुरुष को क्यों न लाउं" फिर एक दिन रातको किसी जवान पुरुष को घरके आंगन में खड़ाकर उसने अपने पति से कहा किः–"यह पुरुष अपने बड़ों के पाससे स्वर्ग से आया हुआ है और मेरे साथही एकान्त में कुछ बातचित करना चाहता है, परन्तु मैं आपके पूछे विना कुछ भी नहीं करसकती हूँ। क्योंकि लोग दूसरों के घरका संताप लेकरही फिरते रहते हैं इससे वे कुछ दूसरी ही मानले बाकी मैं कैसी हूं तो आप अच्छी तरह जानते हो ज्यादे मैं क्या

कहूं" ? इस प्रकार सुनकर उसने कहा कि "ऐसा बोलना तेरेको उचित नहीं, क्यों कि तेरे सम्बन्धमें मेरे को कुछ सन्देह हो सक्ता है क्या ? मैं दूसरे अल्पज्ञ के जैसा नहीं हूं कि दूसरेके कथन को मानकर अपने घरकी फजिहत करूं, इसलिये जा तू खुशीसे उसकी बात सुन, 'तेरे को उसका इस तरह से आदर सत्कार करना चाहिये जिससे बड़ावे अपने घर सदा प्रसन्न रहें' इस प्रकार भोले पति का हुक्म होतेही वह माया युक्त मृगांक्षी उस पुरुष के पास गई और इच्छापूर्वक उसके साथ क्रीड़ा की। फिर उसनें आकर अपने पति से कहाः– "पहिले तो उसने कहाकि 'तुम हमारी बराबर भक्ती नहीं करते' ऐसे दोष बताकर मेरी कुछ कदर्थना की, परन्तु फिर मैंने भक्ती और विनय से उसको इस तरह से संतुष्ट किया कि वह तुम्हारे बड़ावों को जरूर प्रसन्न करेगा। बड़ावों के दूसरे बहुत कामो के कारण वह यहां आया हुआ है। इससे मैने उसको न्योता दिया है कि, जहां तक तुम्हारा यहां रहना हो वहां तक हमारे ही घर भोजन करना" फिर उसने कहा किः-"यह तेने बहुत अच्छा किया। अब

दाल–भात और घेवर आदि से उसको अच्छी तरह से भोजन कराना" फिर वह उसका नित्य अच्छी तरहसे पोषण करने लगी और बहुत आनन्दित होनेलगी, फिर अपने पति को किसी दिन कंकू के जैसे लाल सूखे पुष्प देकर और किसी समय दाड़िम आदि फल देकर या और कोई अपूर्व वस्तु देकर कहती कि 'मैंने सब प्रकार के संकट सह कर तुम्हारे बड़ावों को ऐसे सन्तुष्ट किये हैं कि, जिससे तुमको इस पुरुष के साथ ऐसी वस्तु भेजते हैं. यह सुन-कर वह पुर्वजों को भक्ति पूर्वक साष्टांग प्रणाम करने लगा और शेषादिक को शिरपर चढ़ाने लगा, जो कभी कोई उसको कहता कि, 'तेरी स्त्री दुःशीला है' तो वह कहता कि 'मैं सब जानता हूँ' फिर मनमें विचारता है कि 'इसलिये ही मेरी स्त्री ने पहिले ही कहदिया है' इस प्रकार मनमें विचार कर किसी को विशेष उत्तर नहीं देता, एक दिन किसी अनजान पुरुष ने उसको कहा कि, "जो तेरे यहाँ रोज भोजन करता है उसको चल मैं बताता हूँ" इससे वह उसके साथ गया और उस पुरुष को अपने घर में बैठाहुआ देखा, इससे उसने सब हाल अपनी स्त्री से

कहकर उसको पूछाः-"प्रिये ! यह क्या" ? तब उसने कहा "हैं ! तुम घर फोड़नेवाले के वचनों के वश में होगये हो तो अब तुम्हारा मनोरथ पूरा होजावेगा। क्योंकि इस दुनिया में एक समान बहुत लोग तुम्हारे देखने में आवेंगे, इससे किसी समय मेरे सरीखी दूसरी स्त्री को देखकर तुम आलिङ्गन करलोगे, इससे कहीं इस अनर्थ का अनुभव करना पड़ेगा" इत्यादि वचनों से ठपका देकर और अपना कुछ रुष्टभाव बताकर उसको निरुत्तर कर दिया। उस जार पुरुष को बुलाना बंद करदिया, फिर-एक दिन जो अछी भैंस अपने घर दूझती थी. उसको जार पुरुष के हाथ से दूसरी गुप्त जगह छिपवादी, इससे सिंह ने भैंस नहीं दिखने से पूछा किः- 'हे प्रिये ! भैंस दिखती क्यों नहीं'? वह बोली कि 'मैं कुछ नहीं जानती' इस बात से दुःख सहताहुआ भैंस को हर जगह ढूंढने लगा परन्तु कहीं उसका पता नहीं लगा, इससे घर आकर लाखों निसासे डालकर बोलाः- 'हे प्रिये ! ऐसी कीमती भैंस खोई कि जैसी इस पृथ्वीपर और नहीं है' फिर वह स्त्री बोली किः-जैसी तुम्हारी बड़ाओंपर भक्ती हुई, वैसा तुमको फल मिला'

और अभी कई खोवेंगी, इससे वह एकदम खड़ा होकर उसके पाँव पकड़कर बोला कि, 'जो तू कहती है वह, सब सच्चा है, लोगों के कहने से मैंने उनकी अवज्ञा की उसका फल मिलगया, अब तू इस तरह से आराधन कर कि जिससे वह फिर अपनोपर खुश होजावे' यह सुनकर वह क्रोधित होकर बोली "अरे! दुष्ट अब मेरेसे दूर रह' इस प्रकार कह कर बार २ लात मारकर उसकी निर्भर्त्सना करने लगी, इससे वह अत्यन्त भयभीत होकर उसके चरणों में शिर रखकर माफी मांगनेलगा, फिर वह शान्त होकर बोली:- 'अब तुम बदावों का आराधन करो जिससे तुमपर वह फिर कृपा करेंगे, परन्तु अब फिर तू परघरके पण्डित जैसे लोगों के वचन पर विश्वास मत करना; वह बोला कि 'हे प्रिये' इस जन्म में तेरे विपरीत मैं कदापि नहीं करूंगा क्या मेरेको इतनेसेही शिक्षा नहीं मिली? इत्यादि बोलते हुए उस मूर्खको उस कुलटाने अपने लिये पक्का विश्वासी बनालिया, फिर उसने सब बलिदान किया और सुगंधी पुष्प लाकर बदावों की पूजा की, सुगंधी धूप दिया, फिर

रात्री का पहिला पहर बितनेपर उसने अपने जार पुरुष को बुलाकर उसके पति से कहाः- वह पितृ सम्बन्धी पुरुष द्वारपर आकर खड़ा है। इतने में वह बोला कि, 'जा वह क्या कहता है सो सुन और उसकी अच्छीतरह से भक्ति कर ज्यादे क्या कहूँ? जिससे अपना भलाहो वैसा कर' फिर वह जार पुरुष के साथ यथेष्ट स्थान पर गई और प्रा.तकाल में आकर पति को कहने लगी किः- 'बहुत वस्तुएं देकर बड़ावों को प्रसन्न किये हैं इससे चाहे जहां से भैंस पीछी आजायगी और तुम्हारा सब तरह से कुशल करेंगे, फिर प्रातःकाल में ज्योंही प्रकाश फैलने लगा त्योंहीं कहीं से भैंस आवाज देती हुई आकर द्वार पर खड़ी रही। इससे सिंह बहुतही सन्तुष्ट हुआ और स्त्री पर उसका पूर्ण विश्वास हुआ और प्रीयतमा पर अत्यन्त अनुरक्त होगया। उसने मन्नत का नामलेकर उसके शिरका मुण्डन आदि किया। इस प्रकार विषय रागधारी रागकेसरी ने उसको वश में करके इस तरह से बिडांबत किया कि वह देव-गुरू आदि का त्याग करके अपनी स्त्री में ही चित्त लगाकर रहने लगा। एक

समय किसीने उसको पूछा कि:- अरे ! तेने सम्यग्दर्शन की सेवा करने का अभिग्रह लीया है तो फिर यह क्या ? तब सिंहने उत्तर दिया।

"सम्यग्दर्शनपेतस्याः, प्रियाया एव निश्चितम् ।
सम्यग्दर्शनोन्यस्तु, कोऽपि धूर्त्तप्रकल्पितः" ॥ १ ॥

"हे भद्र ! इस प्रिया के मुखारविंद के दर्शन ये ही सचा सम्यग्दर्शन है दूसरा सम्यग्दर्शन तो किसी धूर्त ने कल्पित बनाया हुआ मालुम होता है," इस प्रकार बोलताहुआ ऐसे उस सिंहमें रागकेसरी की अत्यन्त व्याप्ति देखकर, पहिले के सदृश सम्यग्दर्शन चलागया। इतने में मिथ्यादर्शन ने प्रवेश किया, अनुक्रम से उस को मारकर संहार किया। इससे वह उसको पहिले के माफिक एकेन्द्रियादिक में लेगया और वहाँ बहुत समय तक बांध रखा।

अन्यदा कर्मराजा ने उसको फिर मनुष्य क्षेत्र में

जिनदास के घर पुत्री बनाकर उत्पन्न किया, उसका जिनश्री ऐसा नाम रखने में आया। जिनदास का सारा कुटुम्ब सम्यग्दर्शन का उपासक होने से जिनश्री भी सम्यक्त्व वासित हुई, उसकी भोगपुर निवासी विमल शेठ के साथ शादी की। वह भी श्रावक होनेसे जिनश्री उसके घर जैन-धर्म अच्छी तरह पाल सकी, देवको वंदन करती, गुरुको नमस्कार करती और उसके पाससे धर्म सुनती अनुक्रमसे उसके दो पुत्र हुए और उसे घर का नायक पन मिला, फिर बड़े पुत्रका सार्थवाह की धनश्री नाम की पुत्री के साथ व्याह किया।

अब द्वेष गजेन्द्र नामके पुत्रने मोहराजा को विज्ञप्ति की कि "मेरे बड़ावे बन्धु रागकेसरीने आपके मनको अच्छी तरह संतोष दिलाया है। अबतो अनुक्रमसे प्राप्त हुआ यह कार्य्य छोटे भाई के करनेका है" इस प्रकार कहकर अपने पिता को नमस्कार करके वह अमर्ष को धारण कर जिनश्री के पास गया, उसके सन्निधान से उसको धनश्री वधू पर द्वेष भाव उत्पन्न हुआ, इससे उसकी दृष्टिमें

आतेही वह जलाकरती, मधुर शब्द तो उसके पास क-
भी बोलती ही नहीं, उसके भोजन में मिष्टान्न आदि कभी
वह देतीही नहीं, विना कारण कड़वे वचन बोला करती,
किसी समय कुड़छी आदि से उसके शिर में मारती, वह
जो २ काम करती उसमें वह दूषणही बताती, उसके हाथ
से किसी भिक्षुक को दान नहीं दिलाती, इतना होतेहुए
भी वधू उसका सब तरह से विनय करती थी और
परम भक्ति से उसके पाँव धोती तो उल्टी उसे अपने
हाथ से मारकर निर्भत्सना करती, वह शरीर दाबने को
आती तो उसके दोनों हाथ पकड़कर दूर करदेती थी,
परोसने के लिये कभी वह पास बैठ जाती या खड़ी रहती
तो भी उसका तिरस्कार करती और वहू की मुख्त्यारी से
कुछ भी काम नहीं होवे इस कारण वह क्षणभर भी अपना
घर नहीं छोड़ती थी, देव-वंदन गुरु-दर्शन और धर्म-चिंतन
या श्रवण कभी भी शांति से या मनोभावसे नहीं करती,
पहिले बहुतसी फूटी हुई डाकणी वगैरा का स्मरण कर
विना कारण अपराध खड़ाकरके सब मनुष्यों को वह
कहतीफिरती और शुद्ध भाव वाली ऐसी वधू पर वारंवार

आक्रोश करती, वह नित्य द्वेष रूप अग्नि से भीतर ही भीतर जलाकरती।

धीरे २ उसके वह सब स्वरूप परिवार सहित, विमल श्रेष्ठी को और सारे गाँव वालों के जानने में आये, फिर जो कोई उसको शिक्षा देनेको जाता तो उसपर वह बहुत क्रोधित होती। इस प्रकार द्वेषाग्नि से अत्यन्त जलती हुई देखकर सम्यग्दर्शन ने उसको सर्वथा त्याग किया, इससे मिथ्यादर्शन और दूसरे मोहसैन्य ने उसको निःशंक हो-कर घेरलिया। एक समय वह बहुत द्वेष में आगई, उस समय कोई महर्द्धिक शेठ विमल श्रेष्ठी के पास आया, उस-को घरमें बैठा हुआ देख, ऐसी मौन धारण की हुई वधू पर बहुत आक्रोश करती हुई जिनश्री को जानेलगी, इससे उसने कहाः- "हे महाभागे! तू यह वृथा क्रोध किसलिये करती है? क्योंकिः-

"सत्कं कस्य गृहमिदं, यास्यति सहकेन चेयमपि लक्ष्मीः।
कतिपयदिनपर्यंते, नत्वं नगृहं चेयंश्रीः" ॥ १ ॥

"यह घर किसका है, यह लक्ष्मी किसके साथ जानेकी है, कितने दिनो बाद तू नहीं रहेगा न यह घर रहनेका और न यह भी लक्ष्मी रहनेकी" यह विचारी तेरी वधू अच्छे स्वभावकी जानपड़ती है, तो फिर विना कारण क्यो दुःख देती है। कलही सब घर आदि इसीके आधीन होनेवाला है." इस प्रकार बहुत तरहसे समझाकर वह गया उसपर उसको बहुत क्रोध आया, मगर उसके साथ उसका कुछ चला नहीं, इससे उसने गुस्सा बहूपर उतारकर कहा:- 'अरे कपटी दुष्टे तू क्या संकेत करके इस शिक्षाके देनेवालेको मेरे पास लाई'? इस प्रकार आक्षेप पूर्वक कहती हुई शाक काटनेकी एक तेज छुरी पास पड़ी थी उसको लेकर उस विचारी वहू पर दौड़ी उसको नीचे गिराकर मारनेकी इच्छासे छातीपर चढ़ बैठी इससे सब कुटुम्बी हाहाकार करके दौड़े, जब वह उनपर प्रहार करनेके लिये झुकी तब कुटुम्बियोंनें उसको पानी पत्थर ओर लकड़ीसे इतनी मारी कि वह तुरन्त मरगई इस प्रकार अनुचित बनाव देखकर विमल श्रेष्ठीने कुटुम्ब सहित दीक्षा ली, जिनश्रीका जीव वहांसे

नर्कमें फिर एकेन्द्रियादिक में अत्यन्त दुःखित होकर अनन्त काल तक फिरा ।

एक समय वह संसारी जीव जगत्में ज्वलनशिख नामका श्रीमान् ब्राह्मण हुआ, वहां साधु और श्रावकके सत्सङ्गसे उसको किसी तरहसे सम्यकत्वका लाभ हुआ, और वहुत वर्षोंतक जैनधर्म पाला, अन्यदा मोहराजाने उसके पास निर्धनताको भेजी, उसके साथ उसकी सह-चारिणी दरिद्रता भी आई, उन दोनोने ज्वलनशिखको घेरलिया उससे वह विचारा निर्धन और दरिद्री होकर किसी देहातमें जाकर रहा, वहां आजीविका का दूसरा उपाय नहीं होनेसे वह खेती करने लगा ।

अब अनंतानुवंधी क्रोध जिसका दूसरा नाम वैश्व-नर है, द्वेषगजेंद्रके वड़े पुत्रने द्वेषगजेंद्रको अर्ज की :- " हे तात ! मैं पहिले ज्वलनशिख के पास रहा था, लेकिन वहां वीचमें सम्यग्दर्शन शत्रु आकर रहा और उसने हमको दूर कर दिया अब वहां जानेका मोका है इससे तु

विश्रांती लो और मेरेको आज्ञा दो कि जिससे मैं मेरा बल बताऊं और आपकी कृपासे अपने वैरी सम्यग्दर्शन को वहांसे निकालदूँ " तब पिताने आज्ञा दी, इससे वह अनन्तानुबंधी क्रोध ज्वलनशिख के पास गया, उसके संनिधान से यथार्थ नाम वाला वह बार २ क्रोधित हो अपनी स्त्री को मारता और अगर कोई छुड़ानेको आता तो छोड़ता नहीं बालकोंको अयोग्य तरहसे मारता और बांधता, पिताकीभी परवाह नहीं करता, माताकोभी गिनता नहीं, बन्धुओंका विचारभी नहीं करता, शिष्ट जनोंकोतो वह देखताही नहीं, गुरुका या बड़ोंका विचार नहीं करता, सबके साथ विना कारण क्रोधकरता, इस प्रकार एक वैश्वानररूप होकर भृकुटी चड़ाकर, पग मस्तक और शरीरको ताम्ररूप करता, सूर्योदय के समान लाल नेत्र करता, छिन्नपर्ण के समान कांपता और पसीनेकी बूंदें डालता, ऐसा वह योग्य कथन स्मरण विनाही उटपटाङ्ग बकतारहता इस प्रचंडतासे वह प्रत्येक जगह कर्परक नामसे प्रसिद्ध हुआ ।

एक दिन नीचकुलवालों के माफिक कृत्य करने वाला ऐसा वह चने के खेतमें हल हांकता था, हल के साथ एक अड़नेवाला बैल जोतेहुए था, वह जवान और पुष्ट होतेहुए भी चलता नहीं था, इससे बहुत क्रोधित होकर वह ब्राह्मण उसको चाबुक और लकड़ीसे खूब मारता मगर उसके न चलनेसे, पीछेकी जांघो में, खुरके पीछेके हिस्सों में, पासके दोनोतरफ पेटमें, आगे के पाँव में, कंधे में और गर्दनपर वह रस्सी और चाबुकसे बहुत मारता, इससे वह बिचारा अड़ेल बैल जीभ निकालकर नीचे बैठ गया, इससे वह अत्यन्त क्रोधित होकर उसकी जीभ बाँधकर पूंछ मरोड़नेलगा तथा बहुत बड़े मिट्टीके ढेलोंसे उसको यहां तक मारा कि वह बड़ा पुष्ट होतेहुएभी जल्दीही मरगया, इतने करनेपर भी उस ब्राह्मणको क्रोधाग्नि शांत नहीं हुई, वह अधिक क्रोधित होता गया आखिर अत्यन्त क्रोधसे वह अंधा बन गया। इतनेमें अत्यन्त क्रोधसे उसका हृदय बंध हो-गया जिससे कि वह मृत्युको प्राप्त होगया, फिर मिथ्या-दर्शन आदि मोहसैन्यने उसको पकड़कर घोर नरकमें

डालदिया और बड़े दुःख से दुःखित करके बहुत समय तक संसार में फिराया।

एक समय कर्मराजाने सम्यग्दृष्टि धनंजय नाम के महाराजा के समग्र अंतःपुर में, प्रधान रुकमिणी नामकी पटरानी परम श्राविका के कुक्षिमें, उस संसारी जीवको कुबेर नाम का पुत्र उत्पन्न किया, वहां श्रावक कुलमें उत्पन्न होनेसे उस को सम्यग्दर्शन की संगति हुई,बुद्धि के बल से वह थोड़े समयमें बहुत कला सीखा और सब कामिनियों को इष्ट ऐसी यौवन अवस्था में आपहुँचा, वहां विषम पल्लीवाले बन में रहनेवाला और धनंजय राजाके पूर्वजों से अजीत ऐसा व्याघ्र नामका पल्लीपति था, वह नित्य दुर्गादेवी की कृपासे धनंजय राजाके सब देशों को लूटताथा; उस समय उसने किसी देशमें बहुत उपद्रव किया, इससे कुबेर कुमार ने उसपर चढ़ाई की, उसने देवयोगसे उसको पकड़ा और उसका किल्ला अपने ताबे में किया। वहां राजकुमार के गीत-गान होने लगे, बन्दीजन उसकी स्तुति करने लगे, इससे मौकापाकर

वैश्वानर का भाई, जिसका दूसरा नाम शैलराज है ऐसा अनन्तानुबंधी मान नामका द्वेप गजेन्द्र का दूसरा पुत्र पिता की आज्ञा लेकर उसके पास आया। उसके संनिधान से उसका हृदय उन्नत बना, आँखे ऊँची चढ़ने लगी, घमण्ड होने लगा, अपनी किर्ती के उत्कर्ष से वह भूमण्डल में नहीं समाता, तिनों लोकों में से अपने को विशेप समझता और लोगोंके सामने कहताथा कि "हमारे पूर्वजोंने तो विधवा के सरीखा राज्य किया, जो इस विचारे पल्ली पति को भी पकड़ नहीं सके, और यह मेरे पिता धनंजय उस वनिये जैसे ही हैं। अगर मेरा जन्म इनके यहां नहीं होता तो इतने दिनों में यह दुष्ट इनको बांध ही लेता "इस प्रकार उसके वचनों को सुनकर उसके इच्छानुसार चलनेवाले उसके मित्र उसके पास आकर कहनेलगे,:- " कुमार जो कहते हैं वह सत्य है, यह कुमारतो देवता को भी अगम्य हैं, इन कुमार के सिवाय इस दुष्टको पकड़नेवाला कोई नहीं है, नहीं तो इतने समय तक किसी ने उसके सामने जाने का साहस क्यों नहीं किया ?" इत्यादि वचनों से उन्होंने

उसको बहुत चढ़ाया, इससे वह अत्यन्त घमन्डी होगया, फिर वह अपने स्थान से माता-पिता को प्रणाम करने को नहीं जाता, पिताके साथ बात भी नहीं करता, देवता को नमस्कार नहीं करता, गुरूको वंदना नहीं करता, वृद्धों का सन्मान नहीं करता, पास रहने वाले विद्वानों से बोलता नहीं केवल श्रृङ्गार सजाकर बड़े सिंहासन पर चढ़कर तांबूल से गाल फुलाकर स्खलित भाषासे वथा २ बोलता और एक आँख बंद करके तथा एक आँख टेढ़ी करके बाकी के तिनों भूवनों को त्रण समान गिनता और अपने महल मेंही खुशामदी दुष्ट जनोंसे परिवेष्टित होकर रहता।

एक दिन राजा ने कुछ शिक्षा देकर मुख्य मंत्रियों को उसके पास भेजे, इन्होंने जाकर कहाः- "हे कुमार पिताजी आपको कहलाते हैं कि बहुत दिन हुए हमको तेरेसे मिलने की उत्कण्ठा होरही है, इसलिये यहां आकर हमारे साथ मधुर वार्ता-लाप करो, "यह सुनकर इसने नाक चढ़ाकर टेढ़ी नजर करके अवज्ञा पूर्वक कहा किः-

"वहां क्या काम है? क्या दूसरे किसीने तुमको सङ्कट में डाला है? जो ऐसा हो तो बात करो, जिससे तुमको बाधा डालने वाले इन्द्रको भी बांध कर तुम्हारे पास भेजदूं परन्तु हम किसी के पास नहीं जाते हैं। जो यहां हमारे पास कोई नहीं आवे तो हमको किसीसेभी प्रयोजन नहीं, ऐसाकौन समर्थ है? क्या कोई कुछ करसकता है"? इसप्रकार सुनकर मंत्रियों ने कहा कि: "हे कुमार! अपनी कीर्ती की कथामात्रसे दुश्मनों का नाश करने वाला और वडावों की भक्ति करनेवाला, ऐसा तुम्हारे जैसा पुत्र हो यहां तक राजाको बांधनेवाला कोई नहीं परन्तु यह बात आप जैसेको कहने योग्य नहीं है कि मैं पिता के पास नहीं आता। कहा है कि:-

"शौर्यं सौंदर्यं वा, विद्या लक्ष्मीर्वचस्वितान्यो वा।
शोभां न वहति गुणो, विनयालंकारपरिहीनः" ॥ १ ॥

शौर्य, सौंदर्य, विद्या, लक्ष्मी, पांडित्य या और कोई गुण जो विनयरूप अलंकार रहित होवे तो वह शोभा

नहीं पाता वैसेही:-

"त्यागो गुणो गुणताधिको मतो में,
विद्या विभूषयति तं यदि किं ब्रवीमि।
पर्याप्तमस्ति यदि शौर्यमपीह किंतु,
यत्रस्ति तेषु विनयः सगुणाधिराजः" ॥१॥

"सो गुणो से दानगुण अधिक है, ऐसा मैं मानता हूँ उसको भी जो विद्या विभूषित करेतो फिर कहनाही क्या? और उसमें जो शौर्य होयतो बहुत ही अच्छा, परन्तु सब गुणों के साथ विनय होवेतो अत्यन्त श्रेष्ठ है। क्योंकि वह गुणाधिराज गिनाजाता है।" तुमने शास्त्र में सुना होगा कि:-

"दुःप्रतिकारौ मातपितरौ स्वामी गुरूश्च लोकेऽस्मिन्।
तत्र गुरू रिहामुत्रच, सुदु:करतर प्रतिकारः" ॥ १ ॥

"इस संसार में माता-पिता और गुरू आदि बड़ों के उपकार से किसी प्रकार उऋण नहीं होसकते, परन्तु उसमें से भी गुरू के उपकार का बदला इस लोक और

परलोक में भी दियाजाना कठिन है" इस प्रकार कहकर वे और आगे कहने को थे कि शैलराज की प्रेरणासे कुबेर कुमार बोला:-"अरे मूर्खो! स्वयं त्रैलोक्य के सब तत्त्वों को जानने वाला ऐसा मुझको तुम शिक्षा देने वाले कोन हो! जाओ तुम्हारे पिताकोही इस प्रकार शिक्षा देना" इस प्रकार कहकर उनको पकड़कर दर्वाजे बाहर निकाल दिये। फिर जाकर उन्होंने सारी हकीकत राजा को कही, इससे राजाने विचार किया, "अहो! मेरे पुत्र को शैलराजाने गहरी तौरपर घेरलिया है, इस लिये राज्य को छोड़देना ठीक है ऐसे राज्य से क्या? कि जाहां मोह महाशत्रु के सैन्य से इस प्रकार प्राणी विडंबना पाते हैं" इस प्रकार विचारकर उसने कुबेर कुमार का राज्याभिषेक करने की तैय्यारी कराई परन्तु यह बात उसने किसी को नहीं कही।

फिर एक दिन उसको बुलाने के लिये नगर के बड़े २ गृहस्थों को भेजे, उन्होंने जाकर प्रणाम करके कहा:-"हे कुमार! कुछ महान काम है, इसलिये एक

क्षणभरके लिये राजाजी के पास "चलो" शैलराजा की प्रेरणा से उसने उनका अपमान किया, मन्त्री लोग गये वे भी आश्चर्य युक्त होकर पीछे गये, फिर राजाने सामंतो को भेजे उनका भी उसने पहिले के माफिक ही अपमान किया, फिर उसकी माता को भेजी उसको भी उसने अज्ञानता के कारण धिक्कार दिया, परन्तु पुत्र के प्रेमसे अपमान कराकर और वह उदास थी तो भी उसके पाँव लगकर महाकष्ट से उसको राजा के पास ले आई राजाने उसको बैठने के लिये बड़ा सिंहासन दिया वहां ऊँचा मुह करके भृकुटी चढ़ाकर बैठा, फिर राजाने कहा कि:-"हे वत्स ? तेरे शौर्य गुणोंको सुनकर रंजित होकर राजाओंने तेरेको अपनी कन्या देनेके लिये इन दूतों को भेजे हैं, उनको शादी कर उनका मनोरथ सिद्ध कर तथा इस राज्य को अंगीकार कर कि जिससे तेरा महाराज्याभिषेक करें, हमने बहुत समय तक भोग भोगे हैं इस लिये मैं पूर्वजों के मार्गका अनुसरण करूं और संसार सागर से पार उतारनेवाली महानौका समान ऐसी जैन दीक्षा का आश्रयलूं" इस प्रकार सुनने के साथ

शैलराजाने उसके कानमें एक गुढ़ मन्त्र कहदिया, इससे वह गुस्से में होकर भृकुटी चढ़ाकर बोला:— "क्यों मेरेको सिर्फ इतने ही प्रयोजन से इतने बड़े आग्रह से यहां बुलाया"? परन्तु आजके दिन या रात्री को प्रलय क्यों नहीं होता? हम दूसरे का दियाहुआ राज्य क्यों लें। इत्यादि आक्षेप सहित बोलकर अपने पाँव की रज से प्रहार कर आसनपर आघात कर खड़ा होगया, वहां से बाहर निकलते ही, यह बिलकुल नाला-यक है इस प्रकार निश्चय कर सम्यग्दर्शन ने उसकी सर्वथा उपेक्षा की, फिर मिथ्यात और शैलराजादि मोह सैन्य जिसके साथ है ऐसा वह नगरके बाहर निकलकर महा अटवीमें आ पहुँचा, फिर राजाने अपने छोटे भाई नील को राज्य देकर दीक्षाली और थोड़े समय में मोक्ष प्राप्त की।

अब महाअटवीमें फिरतेहुए कुबेर कुमारको पल्लीपति के पुत्र चित्रकने जो संग्राम में से भगकर महा अटवी में भटक राहाथा, देखा, पिता के वैर के कारण दोनो में

बहुत युद्ध हुआ, चित्रकने रौद्रध्यान के वशहुए कुमार को मारडाला और उसको उसने मारडाला, फिर कुबेर मरकर महा नर्कमें गया, वहां से फिर मत्स्यादिक में आया और वहां बहुत समय तक अत्यन्त दुःखी होकर बंधा रहा।

अन्यदा कर्म परिणाम राजा उसको महापुर नाम के नगर में लेआया और वहां पर श्रावक और यथार्थ नाम-धारी धनाढ्य श्रेष्ठी के घर पुत्र रूप उत्पन्न किया। उसका पद्म ऐसा नाम रखने में आया, वहां बाल्या अव-स्था ही से रागकेसरी की पुत्री जिसका दूसरा नाम बहु-लिका है। उस अनन्तानुबंधी मायाने उसको घेरलिया। उसके उदय होनेसे बहुत बालकों के साथ खेलाकरता और उनको ठगकर उनके पाससे खाने की वस्तुएं वगैरा लेनेलगा, माया की प्रधानता होनेसे वह अपने में भले-पने का स्थापन और वचन-रचना से लोगों का रंजन करताथा, कुछ बड़ा होनेपर माता को ठगने लगा, पिता पर द्रोह करता, बन्धुओं को ठगता, बहनों को जालमें

फसाता, कुटुम्बियों को भ्रममें डालता, कला सीखते समय गुरू को भी ठगता और साथ पढ़नेवालों को बांध लेता, गृह देवालयमें या चैत्यमें उसकी माता आदि उसको लेजाती तो वहां देवको उलटी स्तुति से साधना करता और मौका पाकर वहां चढ़ाये हुए लड्डू आदि खा-जाता, घण्ट आदि चोरकर अपनी काँख में दबालेता और मार खातेहुए भी अपना अपराध स्वीकार नहीं करता अनेक युक्ति से अपराध को छिपालेता, किसी के साथ सत्य भाव से बर्ताव नहीं करता, अपना अभीप्राय पिताको भी नहीं जनाता, माता-पिता के साथ कभी सत्य बोलताही नहीं, इसप्रकार माया की वृद्धि पाताहुआ वह अपने कुटम्ब या दूसरों को प्रायः ठगे विना छोड़ता नहीं, इससे अत्यन्त घबराकर उसके पिता आदि उसको सद्-गुरू के पास लेगये और उनसे निवेदन किया कि:-

"हे भगवन् ! हमारे घर में गोत्रमे कुलमें ऐसा मायावान कभी कोई चाकर भी नहीं है इसलिये हे प्रभो ! कृपाकर के आप इसका उपाय करो कि जिससे हमारे कुल को कलंकित करनेवाली माया का यह त्याग करे और जैन

धर्ममें ध्यान दे," फिर धर्म कथा करने में निपुण और करुणा प्रधान ऐसे गुरु बोलेः-

"माया शीलः पुरुषो, यद्यपि न करोति कंचिद् पराधम् ।
सर्प इव विश्वास्यो, भवतीह यथामदोषहतः ॥ १ ॥

"मायावी पुरुष कुछभी अपराध नहीं करे, तथापि अपने दोष से दूषित होकर सर्प के समान इस जगत् में अविश्वासी बनते हैं" उसी माफिक माया करने वाले जीवों का हीनकुलमें उत्पन्न हुई स्त्रीयों से जन्म होता है और ये नरक में अनन्तीवार दुःखों का अनुभव करते हैं." इत्यादि धर्म उपदेश गुरुमहाराज ने किया, जिससे कर्मपरिणाम की अनुकूलतासे उसकी माया कितनेक समयतक मंदहोगई कितनेक समय तक मिथ्या दर्शन छुप गाया, सम्यग्दर्शन प्रगटहुआ और बहुत दिनो तक वह उनकी सेवा करता रहा।

अब एक दिन विश्वास आनेसे पिताने, उसको अपने पास सोनेके पाटपर पर बैठाया। एक दिन

दुकान उसको सौंपकर धनाढ्य शेठ भोजन करने के लिये गया, इतने में घोड़े पर जाते हुए राजा के हाथ मेंसे महामुद्रिका का रत्न जमीन पर पड़गया. जमीन पर पड़ाहुआ रत्न किसीको मिला और वह लेकर पद्मके पास आया, 'यह रत्न राजाका है' यह जानते हुए अपना मौका देखकर पहिले सब तरह से परिचय आई हुई माया ने प्रेरणा की कि 'मेरे बलसे यह रत्न लेले, फिर समय आने पर वेचडालना' इस प्रकार उसका वचन उसने मनमें विचारा, बस क्या था तुरन्त मिथ्यादर्शन आदि मोहसैन्य आये इससे पहिले की तरह सम्यग्दर्शन अदृश्य होगया, फिर उसने उस मुद्रारत्न को बहुत किंमती होने पर भी थोड़ेसे मोलमें लेलिया और अपने पिताको भी यहबात नहीं कही, उसको छिपाकर दूसरीही जगह रखदिया, इतनेमें राजने ढंढोरा पिटाया कि:- मेरा मुद्रारत्न को जो लाकर देगा तो वह निर्दोष ठहरेगा और ऐसा मेरा हुक्म होतेहुए भी जो नहीं देगा तो फिर अपने प्राण समेत रत्न देनापड़ेगा; इस प्रकार सुनकर सारे नगरवासी भयभीत होगये। इस बात को

धनाढ्य शेठने पासके दुकानदारसे सुनकर इससे उसने अपने पुत्रको एकान्तमें लेजाकर पूछा, मगर उसने माया की प्रधानतासे कानपर हाथ रखकर कहा कि:-अरे यह पाप शांत होवे ? क्या ऐसा महा साहस कोई करसकता है ? फिर उसकी माताने उसी तरह पूछा, फिर पड़ोसियोंने और फिर नगरके सब शिष्टजनोंने उसको पूछा, परन्तु बहुत समयसे उत्पन्न होकर मजबूत हुई ऐसी कठिन मायाकी जड़से उसका कोई भेद मालुम नहीं कर सका।

फिर एक दिन राजाके जवाहिरातके भण्डारीने,अपने खास आदमियोंको, दूर देशसे आये हुए महर्द्धिक व्यापारी का रूप धारण करके पद्मके पास भेजा. उसने एकान्तमें बुलाकर पद्मको कहा कि, " सिंहलद्विपके राजाने महा मुल्यवाला एक मुद्रारत्न लेनेके लिये मुझको भेजा है। इसलिये जो तुम्हारे पास होतो बताओ, उसका मूल्य जो तुम मांगोगे उससे ज्यादे तुमको दिलाउंग इस प्रकार सुनकर पद्मने विचार किया कि इसको जो

दूंगा तो बहुत दूर देशमें जावेगा और किसीको खबरभी नहीं पड़ेगी," इस प्रकार विचारकर उस मुद्रारत्नको लाकर बताया। इतनेमें संकेत माफिक वहां राज पुरुष आ पहुँचे और उस मुद्रारत्न सहित उसको पकड़कर राजमन्दिरमें लेगये वहां अपना मुद्रारत्न पहिचाना इससे बहुत दुःख देकर उसको मरवाडाला, वहां से मरकर उसने बहुत रोगोंसे जुगुप्सित ऐसा कुतेका अवतार प्राप्त किया और बहुत दुःखी होकर बहुत समय तक फिरा।

अन्यदा कर्मपरिणाम राजा उसको जयपुर नाम के नगरमें लेआया और वहां श्रावक कुलमें धन्नदत्त श्रावक के घर पुत्र रूप उत्पन्न किया, उसका सोमदत्त नाम रखा श्रावक कुलमें उत्पन्न होनेहीसे उसको सम्यग्दर्शन की प्राप्ती हूई वहां निर्धन होनेसे शिरपर तेल नमक वगैरा लेकर फिरता, फिर कुछ द्रव्य इकट्ठा हुआ इससे उसने धान्यकी दुकान की और उसमें कुछ ज्यादे धन इकट्ठा किया इतनेमें मौकापाकर रागकेसरीने उसके पास जिसका दूसरा नाम सागर है ऐसे बहुलिकाके

छोटे भाई अनन्तानुबन्धी लोभ नामके अपने पुत्रको भेजा, उसके उपदेशसे सोमदत्तको धन कमानेकी बहुत इच्छा बढ़ गई। एक साथ बहुतसे व्यौपार करनेसे वह सहस्र-पति हुआ और लाखों क्लेश सहन कर लखपति हुआ तथा अनेकबार क्रोड़ों दुःख सहन कर वह कोटीध्वज हुआ। इस प्रकार जैसे २ उसको धन मिलता गया वैसे २ लोभकी इच्छा बढ़तीगई, फिर लोभ से अत्यन्त दबाहुआ वह अज्ञानतासे देवपर आक्षेप करता और कहता कि 'उनके पाससे अत्यन्त याचना और आराधना करते हुए भी यह देव किसीको एक भी रुपया नहीं देते हैं।' इस तरह गुरूपर द्वेष करता और उनके उपदेश को विघ्नरूप मानता, धर्म कृत्यका अनादर करता और पाप में तत्पर रहता, इससे सम्यग्दर्शनने निःशंक होकर उसका त्याग किया, इससे मिथ्यादर्शन आदि मोहसैन्य ने उसको घेरलिया, फिर उसने द्रव्य पैदा करने के लिये बहुत प्रयत्न शुरू किये हरदिन क्लेश और असं-तोष से उसका धन इतना बढ़गया कि करोड़ों रत्न उसने इकट्ठे करलिये इससे वह एक बड़े श्रेष्ठ की

संपत्तिको प्राप्त हुआ, तथापि द्रव्य इकट्ठा करनेकी लाल-साकी चिन्तासे और नहीं इकट्ठा करने योग्य इकट्ठा करनेकी बड़ी इच्छासे, वह रात्रीको भी बराबर नहीं सोता, हमेशा सुखसे भोजनभी नहीं करता, नित्य धनके लेन—देनका खाता देखाकरता एक कौड़ीके लिये पिताको चिन्ता प्राप्त कराता, धनके खर्च करनेकी शंका से माताकाभी त्याग करदिया, तलके तुषका तीसरा भाग भी किसी भिखारीको नहीं देता, कुटम्बको बहुत समय मांगनेसे अपनी आँखोसे देखकर, गिनकर, तोल-कर बड़े कष्टसे खानेको देता, आप खुद बहुत पुराना धान खाता, नये धानको दूसरे वर्षके लिये इकट्ठा करके रखता, किसीकाभी विश्वास नहीं करता और किसीको देनेका होता तो अपनेही हाथसे देता।

एक दफा उसके मामा के पुत्र को किसी कारणसे क्रोड़ों रत्न दिये, उसका हिसाब करते एक कोड़ीका पांचवा भाग किसी तरह पूरा नहीं हुआ, उसके लिये सात रात तक जगकर उसने हिसाब कराया उससे उस

विचारे को अजीर्ण का रोग होनेसे वह मरगया। वहां से वह करचण्ड, महाकत्थक, दग्धहस्त ऐसे नामसे लोगों में प्रसिद्ध हुआ, इससे लोगोंको देतेहुए भी उसके धनको कोई भी विलकुल छूता नहीं, एक समय उसने सुना कि नगर के पास महाअटवीमें महामूल्यवाला एक खादिर के वृक्ष का लक्कड़ पड़ाहुआ है' फिर इस लाभका क्यों त्याग करना चाहिये? इस प्रकार लोभसे दबकर पिता आदि परिजनोंके मनाकरतेहुए भी सिर्फ लोभसे उत्साहित होकर पाँचसो गाड़ियें लेकर वह महाअटवीमें गया, वहां वड़ईसे लक्कड़ कटानेलगा एक समय वे वड़ई देह चिंताके वास्ते इधर उधर होगये इतनेमें किसी क्षुधित क्रूर व्याघ्रने सोमदत्तको वृक्षके नीचे अकेला बैठा देखा इससे कूदकर नखसे उसको चीरकर शरणरहित विलाप करतेहुए को वह खागया। इससे फिर वह एकेन्द्रियादिक में गया और वहां पहिले के माफिक वहुत समय तक फिरा।

इस प्रकार वहुत दुर्लभ ऐसा सम्यक्त्व पाकर के

उस विचारेने किसी भवमें रागसे पराभव पाकर खोया, किसी भवमें घमण्ड करके, किसी भवमें द्वेषके वशहोकर, किसी भवमें अनन्तानुबन्धी क्रोधकरके, किसी भवमें माया रचकर और किसी भवमें लालची होकर खोया। ऐसेही दूसरे भवोंमें किसीसमय शंकादि अतिचारोंसे, किसी समय क्रीड़ाके वश वर्त्तिपानसे, किसी समय विषय सुखकी आसक्ति प्रियवियोग और धन कोपादिके शोक से,किसी समय शत्रु आदि दुःस्थिति से, किसीसमय निन्दा से, किसीसमय स्त्री-वेदके उदय से, और किसी समय स्त्री–पुरुषवेद व किसी समय नपुंसक वेदके उदयसे, किसी समय रोगादिक से उसने सम्यक्त्व रत्न खोया। इस प्रकार प्रत्येक समय अनन्त कालके अन्तरसे क्षेत्र पल्योपमके असंख्य भागवर्त्ती प्रदेश रात्री प्रमाण भवोतक मोहसैन्य ने सम्यक्त्व गुणसे उसको भ्रष्टकिया।

फिर उसको कर्मराजाने विजयखेट नामके नगर में धर्म श्रेष्ठीका सुन्दर नामका पुत्रपने उत्पन्न किया, वहां

एक समय सद्गुरूके पास धर्म सुनने से उसको सम्यग्यर्शन की प्राप्ति हुई, कर्मराजाने विशेप दयाकरके उसको शुद्धतराध्यवसाय नामकी तलवार दी, उसके योग से उस सुन्दरने मोहादि शत्रुओं का पल्योपम पृथकत्व प्रमाण से अनन्त कोटा कोटि देहमें छेदडाला उससे अप्रत्याख्यावरण कषाय दूर होगया इससे सन्तुष्ट होकर सम्यग्दर्शन मंत्रीने उसको गुरूके पास लेजाकर चारित्र-धर्म महाचक्रवर्ती के दर्शन कराये गुरु महाराजने कहाः-

"यःसेवतेऽति भक्त्या, चारित्रमसुं कदाचिदल्पमपि।
सोऽपि महर्द्धिक देवो, भूत्वा निर्वृत्तिवि भुर्भवति" ।१।

"जो प्राणी किसी समय इस चारित्र-धर्म का अति भक्ति पूर्वक थोड़ा भी सेवन करता है, वह महर्द्धिक देव होकर मोक्षका अधिकारी होता है" इत्यादि चारित्र धर्म के गुणोंका सविस्तार वर्णन किया। इससे सुन्दर ने उसका :सम्यग स्वामीभावसे स्वीकार किया। फिर चारित्रधर्म राजा उसकी योग्यतापर विचारकर उसपर

संतुष्टहोकर उसको पहिले देशविरती नामकी छोटी कन्यादी। उसके सन्निधान से उसपर निर्जराधी जीवोंको द्विविध त्रिविध संकल्पसेही बंधन करनेका स्थूल प्रणातिपात विरमणं नामका प्रथम व्रत लिया और उसका वध, बन्धन, चर्मछेद, अतिचार आरोपण और भक्तपान का विच्छेद इन पाँच अतिचारों का प्रत्याख्यान किया, यह व्रत उसने बहुत दिनोंतक पाला।

एक समय उसका पिता मरगया तब गृह व्यवहार सब सुन्दरपर आपड़ा यह मौका जानकर मोहादिकोंने उस के पास क्रूरताको भेजी, उसके सन्निधानसे जिसको वह व्याज पर रुप्या देता, उनको उनका द्रव्य नहीं देता जब वह अति द्रढ़तापूर्वक वह भकत पान वगैराको अटकाया करता इससे बहुतही पीड़ा होती और किसी समय कोई मरभी जाता, एक समय सुन्दर पापोदय से निर्धन अवस्थामें आगया इससे उसने राज्य सेवाको स्वीकार किया, इससे अप्रत्याख्यानावरण क्रोधादिक के साथ हिंसा भी आकर प्रगट हुई, उसके उदय से आजीविका चलानेके लिये कितने

का वध करता कितनों को चाबुक से मारता, कितनों को शीत या गर्मी में बैठाता, कितनों को गरम तेलके छिटकने के दुःखदेता, कितनों को शूली देकर हैरान करता। इससे देश विरती भियाने विरक्त होकर उसको छोड़दिया, फिर वह सिर्फ कुल क्रमसे चलीआईहुई रीतिसे देवालय में जाता वहां जिनेश्वर भगवन्त को वंदना करता, पूजादिक करता, चैत्यवन्दन करता, शासन का कार्य्य करता जिससे शासन का ऐसा अग्रसर होगया इससे वह नर्कादि में नहीं गया, परन्तु देश विरति से भ्रष्ट होनेसे और सम्यक्त्वगुण की विराधना करनेसे, मरकर नीच जाति के भवन पति देवोंमें उत्पन्न हुआ और वहां से फिर बहुत संसार में फिरा।

फिर वह कोई समय सम्यग्दृष्टि शालिभद्र शेठ के माणिकभद्र नामका पुत्र हुआ। वहांपर वह सम्यग्दृष्टि हुआ एक समय देश विरति बालिका के अनुराग से, पहिले के माफिक कन्या गाय के भूमि संबन्धी, थापन रखने संबन्धी, खोटी साक्षी देने सम्बन्धी और कूट

क्रय, विक्रय आदि करने सम्बन्धी, असत्य बोलनेसे निवृत्त होने रूप, दूसरा स्थूल मृषावाद विरमण व्रत द्विविध त्रिविध लिया और उसके सहसात्कारसे किसी को कलंक देना, एकांत बात करनेवालों के संबंधी ज्ञाता ज्ञाता अर्थका बोलना, स्वदारादिक का रहस्य प्रगट करना, मिथ्या उपदेश देना, और खोटा खत लिखना, इस प्रकारसे पाँच अतिचारों का प्रत्याख्यान करना। इस व्रत को बहुत दिनों तक अच्छी तरहसे पाला। एक समय शालीभद्र शेठ मरगया, इससे हाटमें व्यौपार करतेहुए ऐसे उसके पास मोहादिकोने अप्रत्याख्यानावरण लोभ और मृषावाद आदि को भेजा। उनके आनेसे वह पड़ोसियों की सोने आदि की वस्तुएं लेआकर उनका लाभ लेकर ग्राहकों को वैचता और अपनी चीज बाहरसे आई हुई किसी ग्राहक के हाथ में देकर उसका ज्यादे मोल बताकर वैचता, जो ग्राहक पूछता:— "हे श्रेष्ठिन् इस वस्तुका क्या मोल होगा"? वह बोलता:- "इसका इतना मोल होगा" फिर ग्राहक को पूछता:— "तुम्हारी कहां तक खरीदने की इच्छा है" तो वे कहते

कि-'निश्चयसे तुमको इसका इतनाही मूल्य देनाहोगा' इत्यादि वक्रवचनों से ग्राहक उनके कूट वचनों को सत्य मानकर और उसको नफादेकर लेजाते।

एक समय लोभ और मृषावदने अत्यन्त उदय होकर माणीकभद्रको कहा कि, "भद्र! असत्य बोलनेमें तू क्यों शंका करता है? कृत्रीम न्याय की रचना करके ही तू बोलताजा क्यों कि तेरे घरका खर्चा ज्यादे है, दुकानों का भाड़ा बहुत भरनापड़ताहै, वणिक पुत्रोंको तनखा देनी पड़ती है और खान—पान वगैरा भोग भोगने के हैं। इसलिये सत्य बोलनेसे ज्यादे कोई नहीं देता है। दूसरे बहुतसे लोग झूठ बोलते हैं उनकी जो गति होगी वह ही तेरी होगी और यह साधु कहते हैं उसको कहां तक सुनेगे यह दूसरों के घरमें विक्रमादित्य जैसे हैं; संसार के व्यापार रहित और घरवार नहीं होने से यह सुख से सच्चे बोलते हैं। परन्तु इनको संसार की व्यवस्था का अनुभव नहीं है, इनके अभीप्राय माफिक तो शिर का लोच कराकर तुरन्त साधु

बनजाना चाहिये" इस प्रकार की सागर लोभ और मृषावाद की शिक्षा को मनमें सच्ची समझकर वह निशंक मनसे कूट क्रय-विक्रय करनेलगा और असत्य बोलने लगा 'भग्नव्रतहुआ' जानकर देश विरतिने उसको छोड़दिया फिर वह जिन मंदिरमें केवल कुलाचार के कारण जाता और पूजादिक करता, गुरू माता, बन्धु और शिष्टजनों के बहुत शिक्षा देनेपरभी उसने सागर और मृषावाद आदि का परिहार नहीं किया, फिर सम्यक्त्व निराधम होकर वह मरकर हीन व्यन्तर जाति में देवपने उत्पन्न हुआ, वहां अपने स्थान से भ्रष्टहोकर वह अशुभ प्रदेशोंमें भटकनेलगा, वहांसे आयुष्य पूर्णहुई और असत्य जन्म पापसे कभी वह सर्वथा मूक, कहीं तोतला, कहीं गंधे के मुंहवाला, कहीं कंठ, तालू, जीभ, होठ और वदन आदिसे रोगी उसी में कहीं पुत्र कलत्रादिक को अग्राह्यवचनी हुआ और मरकर नर्क में गया अनेकबार तिर्यंचमें गया इस तरहसे बहुत दुःखित होकर बहुत समय तक संसार में फिरा।

एक समय वह श्रावक श्राविका का सोम नामका पुत्र हुआ, वहां पूर्ववत् धन, धान्य, द्रव्य, सूवर्ण: रजत, वस्त्र, तृण, ईधन आदि अदत्त ऐसी कुछभी वस्तु न लेने रूप नीरजरा स्थूल अदत्तादान विरमण व्रत द्विविध त्रिविध लिया और चोरीका माल न लेना, चोरोंको मदद न देनी, विरुद्ध राज्य प्रतिक्रमण न करना, खोटा तोल और खोटा माप न करना और बुरी चीजोंको मिलाकर न वेचनी। इन पाँच अतिचारोंका प्रत्याख्यान किया, कितनेक समय तक इस व्रतको पाला फिर अनुक्रम से माया, लोभ और स्नेयादिक के उपदेश से उस व्रतका भंग करके सम्यक्त्वहीन होकर वह हीन जातिके देवपन को उत्पन्न हुआ और फिर पूर्ववत् निरन्तर दारिद्रय आदि से पराभव पाताहुआ बहुत भव परियन्त फिरा।

फिर दत्त नामका श्रावक जन्ममें उसने देव और तिर्यञ्च: स्त्रीयोंका द्विविध त्रिविध और मनुष्य स्त्रीयोंका एक कर्ण एक जोगसे प्रत्याख्यान किया और परिग्रहिता गमन और वेश्या या विधवाके साथ गमन करना,

अनंग क्रीड़ा करना, पर विवाह करना और कामका तीव्राभिलाषी होना यह पाँच अतिचारोंसे विशुद्ध ऐसा भोग का नियमरूप चौथा स्थूल मैथुन विरमण व्रत ग्रहण किया। उसको तीव्र पुरुष-वेदके उदयसे, तीव्र विषयाभिलाषासे और चक्षुइन्द्रिय तथा स्पर्शेन्द्रिय आदिको उपाधि से भंग करके सम्यक्त्वको विरोध करके यह हीन जाति के देवादिकमें उत्पन्न होकर अनुक्रममें नपुंसकत्वादिक प्राप्तिरूप फल भोगकर संसारमें बहुत फिरा।

एक समय धनबहुल श्रावकके जन्ममें उसने क्षेत्र गृह, हिरण्य, सुवर्ण, धन, धान्य, द्विपद, चतुष्पद और अन्य धातु आदि वस्तुओंका परिणाम करने रूप पाँचमा स्थूल परिग्रह विरमण व्रत लिया और उसके प्रयोजन प्रदान, बंधन कारण और भावसे होतेहुए क्षेत्रादि परिमाणका अतिक्रमण रूप बीचमें अतिचारोंका प्रत्याख्यान किया, वहां अतिचार कुछ दुर्बोध्य होनेसे यहां उसका विवरण करना योग्य है। उनमें क्षेत्र या घरकी संख्यामें नियमसे ज्यादे बाड़ या भींत आदिकी मर्यादासे दूर

करके एक रूपमें जोड़दे उसका प्रयोजन कहते हैं। क्षेत्र, वस्तु प्रमाणातिक्रम चाँदी, सूवर्ण चतुर्मासादि अवधीसे नियतमान किया हो उस मौकेपर संतुष्ट होकर राज आदि पास लेकर नियम पूर्ण होनेपर लेलेंगे ऐसा मनका समाधान कर दूसरे स्वजनादिकके हाथमें देकर रखे, उस प्रदानसे हिरण्य, सूवर्ण, प्रमाणातिक्रम जानना, धन, रुपया आदि गश्तीमें आने वो और धान्य, चांवल वगैरा उसमें नियमित परिमाण करने वास्ते आवे या दूसरा लेनेकी इच्छा हो उस समय मुडां वगैरा बड़े बान्धवोंका अथवा "चार महिने बाद घरमेंके धान्य का विक्रय होने पर लेलूंगा." इस प्रकारकी वचन नियन्त्रणा करके दूसरोंके घर उसको रखना या इकरार करके रूप बन्धन का करना, उसे बन्धन रूप धन धान्य प्रमाणातिक्रम जानना. द्विपद याने पुत्र कलत्र और दासी आदि चतुष्पद बैल अश्वादिक, उनमें वर्ष आदि की मर्यादासे उसका परिणाम करके उसमें प्रसवके संभवसे उनको कितनाक समय व्यतीत करके जो गर्भ ग्रहण करानेमें द्विपद चतुष्पद प्रमाणातिक्रम जानना और कुप्य

याने शैय्या, आसन, भाला, तलवार, भाजन, कटोरे आदि उसमें बाटकेमें दश आदि संख्याका नियम करने बाद जो वह बड़े तो उसको भगाकर बड़ा कराकर दशादिककी संख्या पूरी करना इस तरहसे पर्यायान्तर करनेसे कुप्य प्रमाणातिक्रम जानना, इस प्रकार पाँचवे व्रतके पाँच अतिचार जानना इस परिग्रह परिमाण व्रतका लोभ, आदिकी उपाधीसे भंग करके वह बहुत समय तक संसारमें फिरा।

इस प्रकार सागरादिकके उपदेशसे किसी समयदिक परिमाणव्रत तोड़, सागर और लोलुप्यादिकके योगसे उपभोग और परिभोग व्रतभी तोड़ा और अनर्थ दण्ड विरमणव्रततो हास्य, अज्ञान, तुच्छता और विकथादिकसे तोड़ा, उसमेंही आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान, प्रमाद और कृपणता आदिसे सामायिक, देशावकाशिक, पोषध और अतिथिसे विभाग इन चार व्रतोंकोभी तोड़डाला। इस प्रकार कितनेक भवोंमें उनमेंका एक व्रत, किसी समय दो, किसी समय तीन, किसी समय चार और इसी तरह किसी

समय मोहादिक महाशत्रुओंकी प्रबलता से उसने अङ्गीकार किये हुए बारहों व्रतोंको तोड़डाले ।

एक समय यह कुण्डिनी नगरीमें परमसु श्रावक सुभद्र सार्थवाह के रोहिणी नाम की पुत्रीरूप हुई। वह दूसरे देव को नहीं माननेवाली परम श्राविका हुई। वह जिनेश्वर भगवंतको बहुत भक्ति पूर्वक वंदना करती, गुरूके पास से धर्म सुनती और साध्वियोंकी भक्तिपूर्वक उपासना करती थीं। विमल नामके वणिक पुत्रने उससे व्याह कर घर-जमाई होकर रहनेलगा। पिताकी मददसे विशिष्ट धर्मका आचरण करती थी, एक लाखसेभी ज्यादे स्वाध्यायका उसने पाठ किया, अर्थात उतना उसको मुखाग्र कर्मग्रंथ आदि प्रकरणोंको तो उसने अपने नाम जैसे कंठाग्र कर लियेथे। अनुक्रमसे उसने श्राविकाओंके बारह व्रतोंको अङ्गीकार करलिये और उनको निरतीचार पालती थीं।

एक समय सभामें बैठे हुए मोहचरटने चिन्तातुर होकर दिशाओंकी ओर नजर की इतनेमें मंत्री सामन्त आदि ने कहा कि:-"हे देव! क्या आज्ञा है?" मोहराजा

बोला :–'अपने शत्रुवर्गके साथ रोहिणी अत्यन्त दृढ़ रागवाली हुई देखनेमें आती है, इसलिये अब क्या करना चाहिये'? इस प्रकार सुनकर उन्होंने हंसकर कहा कि:– 'हे देव! जहांतक तुम्हारे परिजनोंको नहीं दिखे वहां तकही सब दृढ़ है,' मोहराजाने कहा :–'तो फिर वहां किसीको भेजना चाहिये जिससे कि यह पराङ्मुख हो जावे' यह सुनकर विकथा उठकर बोली 'हे स्वामिन्! यह आज्ञातो मेरेही को दो, मैं देखूं कि वह कितनोंमें है'? फिर सबकी प्रेरणा से वह रोहिणीके पास गई और उसको स्त्री-पुरुष कथा, राज कथा देश कथा और भक्त कथा ऐसे चाररूप करके परम योगिनीके माफिक रोहिणीके मुख में प्रवेश करगई।

पिताके घर रोहिणीको पहिनने ओढ़नेको निश्चिन्तता से मिलता है और मा-बापकी कृपासे घरमें कोईभी काम नहीं था, इससे दर्शन करने जाते समय कोईभी प्रिय स्त्री मिलजाती तो–उसके पास बैठजाती, और देव वंदनका त्याग करके कहती कि:–'हे सखी! आज तेरे घर

सा हुआ है ऐसा मेरे सुननेमें आया' जवाब देते वह बोलती कि 'ऐसा नहीं हुआ, किसीने झूंठा कह दिया है' फिर रोहिणी कहती कि:—'अरे झूंठी बहिन? क्या तू मेरेको झूंठी बनाती है। वह बोलती कि:— मैं झूंठी किस प्रकार!' इत्यादि वाद-विवाद करते हुए बहुत कोलाहल होजाता। फिर विकथा योगिनीसे उत्साहित होकर वह रोहिणी दूसरी किसी ललनासे राजकथा करने लगजाती जब वह दुःखपाकर चलीजाती तब दूसरी कांता के साथ उन स्त्री—पुरुष की कथा करनेलगजाती वह जब सामू वगैरा के डरसे उठजाती तब दूसरी के साथ भोजन कथा करनेलगती वह चलीजाती तो दूसरी किसीके साथ देश कथा प्रारंभ करनेलगजाती इससे घरसे निकली हुई वह दोपहर होने पहिले वापिस नहीं आती, इस प्रकार नित्य करते हुए देखकर एकदिन किसी श्रावकने हाथ जोड़कर उसको कहा कि:—"हे महा भागे! देव वंदनके लिये जो थोड़ा बहुत समय मिलता है उसको एकाग्र ऐसे शुभ भावसे व्यतीत करना योग्य है, तुम इन वातोंमें समय क्यों गुमाती हो"? यह सुनकर वह रुष्ट होकर उत्तर देती

कि 'बांधव! क्या किया जाय? दूसरी तरह तो कोई किसीको मिल नहीं सकती और कोई किसीके घरपर जा नहीं सकती, सखियोंका मिलाप यहांही होता है. इसलिये कुछ समय यहांही एकान्तमें कुछ सुख दुःखकी वात करलेती हैं तो तुमको उसमें आकरके बाधा डालना योग्यनहीं है"।

इस प्रकार जब साध्वियोंके उपाश्रय जाती तो वहां भी स्वाध्यायका त्यागकरके दूसरी २ श्राविकाओंके साथ उसी प्रकार विकथा शुरू करती और नित्य साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका के दोष देखती उस प्रसंगमें जोकोई साध्वी उसको कुछ शिक्षा देती कि 'हे महाभागे! इस विकथा करनेसे तू सब पढ़ाहुआ भूलजायगी उससे केवल कर्म बंधक ही कारण इस लोक तथा परलोकमें उपद्रव करनेवाली ऐसी विकथा और परपरिवादरूप अनर्थ दण्डसे क्या लाभ है? इसलिये सब संपतिका कारणरूप अमृत समान स्वाध्यायको ही कर' इस प्रकार सुनकर मुह मरोड़कर उत्तर देती कि :–'हे आर्ये! इस विकथा

और परपरिवाद. व्रतियोंको तजना दुर्लभ है तेरे सरीखी चुपचाप बैठरहनेवाली मेरे देखनेमें कोई नहीं आती, सब बातें करतीहै; हमतो सिर्फ आनन्दसे ही वार्तालाप करतीहैं दूसरों की तरह हमको माया करते नहीं आती, जो कुछ हो वहही पिता सम्बन्धी हमतो सत्यही कहती है। जो किसीको अच्छा नहीं लगेतो भलेही रोष करे चाहे अच्छा लगेतो सन्तुष्टहो ' इसप्रकार उत्तर सुननेसे उस विचारी को सदुपदेश के अयोग्य जानकर साध्वियोंने कहना छोड़दिया ऐसा करते २ वह निःशंक होकर गुरु के पास व्याख्यान में बैठी होतो वहां भी वस्त्रसे मुह ढाँक कर किसी स्त्री के कानके पास जाकर कुछ कहती और दूसरी उसको उत्तर देती, इसप्रकार वहां बैठी हुई स्त्रियों में परस्पर वार्त्तालाप चलता था। इस प्रकार जंगली मदोन्मत्त भैंस कलुषित किये हुए पत्ते और तालाब के जल के माफिक व्याख्यान सभा में बैठे हुए सब लोगों को विक्षिप्त करके वह दूसरों को भी सुनने में अन्तराय करती थी, शेठ की पुत्री होने से उसको गुरू शिक्षा देते तो वह कहती कि:- "हे भगवन! मैं तो किसी के भी

साथ बहुत नहीं बोलती हूं, परन्तु जो कोई कुछ पूछे तो उसको तो उत्तर देनाही पड़ता है नहींतो क्रोधित होने का डर रहता है तथा मुझे अभीमानी समझे इस सेही जो कोई कुछ पूछेतो केवल उसके साथ कुछ बोलती हूँ" ऐसे खोटे उत्तर से गुरुमहाराजने उसकी उपेक्षा की, इससे वह सर्वथा स्वतंत्र होकर विकथा करने में अत्यन्त प्रवृत्त होगई। इस प्रकार विकथा में अत्यन्त आसक होने से सब पहिलेका पढ़ाहुआ भूलगई और अर्थ तक भूलगई। अङ्गीकार कियेहुए व्रतोंका वह आलोचन तक नहीं करती और बार२ उनमें अतिचार लगाती वह देव वन्दनमें प्रमाद करती, स्वाध्याय सुखसे नहीं करसकती, धर्म कथामें उसको आनन्द नहीं आता और प्रतिक्रमणादिक भी अनादर से ही करती थी।

एक समय कहीं बैठी हुई स्त्रीके साथ महा विकथा और परपरिवादको करते हुए अत्यन्त परवशहोकर ऐसी वह यहां कोई है या नहीं इसका विचार न करते हुएएक दम बोलीः—"इस नगरके राजाकी पटरानी

अत्यन्त दुःशीला है में उसके सम्बन्धमें बहुत अच्छी तरह से जानती हूँ क्योंकि मैंने यह बात एक भले आदमीके मुहसे सुनीहै" यह सब वहां बैठी हुई राणीकी एक दासी नें एक चित्त होकर सुनलिया और उसने जाकर राणीको सब निवेदन करदिया, फिर रानीने यह बात राजा को कही, इससे उसने रोहिणीको अपने पास बुलाई उसका पिता समुद्रसार्थवाह रोहिणीको लेकर वहां गया. राजाने रोहिणी को एकांत में बुलाकर पूछा कि:-"हे भद्रे! मेरी रानी का जो स्वरूप तेरे सुनने में आया हो वह मेरेको सच्चारकहदे," वह बोली कि:-"यह क्या? मेरेतो सुननेमें कुछभी नहीं आया, मैंतो कुछ नहीं जानती," फिर राजाने उस दासी को बुलाई और उसके पास से सर्व वृतान्त कहलाया। दासीने अनेक सबूत पहुँचाकर उसको ऐसी करदी कि वह विचारी निरुत्तर हुई, गर्दन नीचीकरके मौन धारण करके बैठरही। इससे क्रोधित होकर राजाने समुद्रसार्थवाह को अपने पास बुलाया और उसको दासी के पास से शुरूसे आखिर तक वाकिफ कराया, उससे अचानक पड़ाहुआ महावज्र समान वह हकीकत जानकर

सार्थवाहने रोहिणी को कहा:- "यह क्या वार्त्ता है" परन्तु वह कुछ भी नहीं बोली, आखिर उसको एकान्त में बुलाकर बहुत तरह से पूछा, परन्तु वह कुछभी नहीं बोली, फिर जिसके पास उसने बातकी उसको बुलाकर सार्थवाहने पूछा तब उसने कहाकि:- "यह हकीकत ठीक है। परन्तु वह सत्य है या असत्य है यह मैं नहीं जानती हूँ। पर आगेपर अपनी पुत्री की जीभ स्वतन्त्र हुई जानकर सार्थवाहने उसको रवाने की और अपनी पुत्री को लेकर राजाकेपास आया और आँखोंको पोंछता हुआ उस राजा के चरणोंमें प्रणाम करके कहने लगा:- हे देव! हमारे कुलमें कोई साक्षात् देखलेवे तोभी प्राणान्त होने परभी ऐसा कथन नहीं करे और इस पुत्रीने तो बिलकुल बिना देखी और बिना सुनी झूठी बोलकर बीजके चन्द्रमा सदृश निष्कलंक ऐसा मेरे कुलको कलंकित किया है। परन्तु उसमें मेराही दोष है क्योंकि लोगोंसे इसकी जीभ की स्वतंत्रता सुनतेहुए भी, गृहव्यवहारकी व्यग्रता और प्रमादको लियेहुए मैं इसको शिक्षा न करसका, इसलिये हे राजन्! आपको जैसा योग्यलगे वैसा करो" इस

प्रकार सुनकर राजाने कहा कि- हे सार्थवाह ! मेरे नगर में तू बड़ा पुरुष है, मेरेको मान्य और सत्यवादी है, इस-लिये इस तेरी रोहिणीको टुकड़े २ कर चतुष्पथमें नहीं डलवाता हूँ, मगर तेरेको ऐसा करना चाहिये कि जिससे यह अभी मेरे राज्यकी सीमा बाहर चली जाय" । ऐसा कहकर उसको रवाने किया इससे सार्थवाहने उस स्थान से उसको रवानेकी, फिर 'अहो देखो यह श्राविका यह इसका देववन्दन, यह इसका प्रतिक्रमण, यह इसकी मुह-पत्ती, यह इसका अभ्यास, इन लोगोंका रिवाजही ऐसा है जिससे दूसरोंके फिजूल दोषोंको ग्रहण करतेरहते हैं, और हमेशा दूसरोंको सन्ताप देते हैं । इस प्रकार अपनी और धर्मकी नीच लोगोंसे निंदा कराती ऐसी वह रोहिणी छिपती २ नगरमेंसे बाहार निकल गई।

फिर पिताके वैभव विस्तारको स्मरण करती माताके लालन-पालनको याद करती, बंधुजनोंके गौरवका विचार करती, परिजनकी पूजनीयताका स्मरण करती, सद्गुरुके वियोगका वार २ शोक करती, वार २ मूर्छित होकर

जमीनपर गिरती, पल २ में विलाप करती, ग्रामोग्राम भिक्षाके लिये भटकती और कोमलताके कारण पाँवोमें रुधिर बहनेसे उससे पृथ्विको सींञ्चती, ऐसी वह रोहिणी अप्रत्याख्यानावरण कषायोदय तथा आर्त्तध्यानके वशसे देशविरति गुणोंसे भ्रष्ट हुई, फिर सम्यकत्वकी जिसने विराधना की है ऐसी वह मरकर नीचजातीवाली और जिसका कोई स्वीकार न करे ऐसी देवियोंमें उत्पन्न हुई। वहां बहुत दुःखका अनुभव करके वहांसे एकेन्द्रियादिकमें कहीं सर्वथा जीभके अभावसे और कहीं जिव्हा छेदनका अनुभवसे वह बहुत भवोमें फिरी।

एक समय मोहराजाने अपनी महामूढ़ता नामकी भार्याके हाथमें ताली देकर कहा किः–"हे प्रिये! उस निविड़ श्राविकाका वृतांत देखा? वह बोली कि "हे देव! इसमें क्या ज्यादे देखनेका है? क्योंकि चौदह गुण स्थान रूप पङ्गथ्यावाला सिद्धरूप महाप्रसादका सिर्फ पाँचवे पङ्गथिये तकही चढ़ीहुई एक सामान्य मनुष्यमात्र ऐसी इस विचारी स्त्रीको फिर गिराई, मगर इन्द्र और चक्रवर्त्ती

को पूजनीय होवे, देवताकोभी अक्षोभ्य होवे, असाधारण जिनका पुरुषार्थ होवे और सिद्धि महाप्रसादको चढ़ते हुए ग्यारवें पङ्कथिये तक चढ़हुए होवें उनकोभी तुमने एक हुंकार मात्रहीसे नीचे गिरादिये हैं। ऐसे अनन्ता जीव विचारे आपके पास रोते हुए चरणोंकी शरण लेकर रहते हैं। फिर मोहराजा, मंत्री और सांमतोने मिलकर एक रूप होकर कहा कि:-"अहो! ऐसा सुन्दरतो इस देवीकोही बोलते आताहै यह जो कहती है वह सब सच्चा है।

एक समय फिर वह जीव मनुष्यगतिमें उत्पन्न हुआ वहां उसने सम्यक्त्वके साथ दान धर्मका अभिग्रह लिया। उसकोभी मोह प्रेषित दानान्तराय और कृपणता आदिने भङ्ग किया और वहांसे पडकर बहुत भवोंमें फिरा, फिर एक समय उसने मनुष्यजन्म पाया, वहां उसने शील धर्म का अभिग्रह लिया उसका उसने तीव्रवेदोदय और कुसंसर्ग आदिसे भङ्ग किया, फिर संसारमें फिरकर मनुष्ययोनिमें जन्मा और उसने तप धर्मका अभिग्रह किया उसकाभी

लोलता और कायरता आदिसे भङ्ग किया। इससे फिर संसारमें घूमकर मनुष्ययोनिमें जन्मकर भावनाका अभि ग्रह लिया उसकाभी आर्त्त और रौद्रध्यानसे नाश किया इस प्रकार उसने क्षेत्रपल्योपमके असंख्यात भागका प्रदेश राशि जितने भवोंमें देश विरतिपन अङ्गीकारकर अप्रत्याख्यानावरण कषायादि महादुष्ट मोह सैन्यके वश होकर उसकाभी उसने नाश किया।

ऐसे समयमें विस्मय, हर्ष और भक्तिसे प्रेरित मनवाला चन्द्रमौली राजाने भुवन-भानु केवलीको नमस्कार करके कहा :—"हे भगवन्! महा दुष्ट ऐसे मोहादि शत्रु बहुत दुर्जय हैं ये इस प्रकार अचिंत्य, असहाय और विस्मयकारक प्राणियोंको दुःख देते हैं, परन्तु सकळ सिद्धांतका परम रहस्यरूप आपके व्याख्यानका मात्र एक सन्देहही मेरे पूछनेका है-इसलिये आप उत्तर देनेकी कृपा कीजिये। "सम्यग्दृष्टिको अर्धपुद्गल परावर्त्तसे कुछ कमती संसार हो ऐसा पहिले कहनेमें आया और उसके मध्यमें प्रस्तुत जीवको सम्यक्त्व स्पर्शना और देशविरति-स्पर्शना

असंख्य भवोंमें बार २ हुई और उसको परिभ्रंश होते हुए बीचमें बहुत संसारमें भटका ऐसा कहनेमें आया है। सो उसका प्रमाण कितना है ? सो साफ २ कहो "। केवली बोले कि:-" कहीं संख्यात, कहीं असंख्यात और कहीं अनन्त संसारभी होता है, परन्तु कुछ कम पुद्गल परावर्त्तमें अनन्ती उत्सर्पिणी होती है अनन्ताके अनन्त भेद होते हैं, इसलिये हे महाभाग ! जो अनन्त उत्सर्पिणी चलीजावे तथापि उतने समय तक जिन-धर्मका कुछभी सेवन नहीं होता " फिर चन्द्रमौलिक राजाने प्रणाम करके कहा कि:- " हे भगवन् ! बड़े आश्चर्यकी बात है कि सम्यक्त्व और देशविरति दो गुणोंकी प्राप्ति होते हुए भी इन मोहादि शत्रुओंका इतना ज्यादे प्रभाव रहता है "? केवली बोले कि :-हे राजन् ! अनादिकालसे अस्खलित उनका इसी प्रकारका प्रभाव चलाआता है इससेही सब केवली भगवंत इस प्रकार कहते हैं :—

" सम्मत्त देसविरया, पलिअस्य असंख भागमित्ताओ।
अट्ठभवाओ चरित्ते, अणतंकालं च वम एत्ति " ॥ १ ॥

"सम्यक्त्व और देश विरतिपन जीव क्षेत्रपल्योपमका असंख्यात भागका प्रदेश राशि प्रमाण भवोंमें प्राप्त करता है और सर्व विरति चरित्र मात्र आठ भवोंमेंही प्राप्त कर लेता है वाकी अनन्तकाल उसको वमन कीहुई स्थिति में जाता है।" सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि भावका विशेष-पनेसे रहित ऐसे श्रुतसामायिक सामान्यपनेसे अनन्त भवोंमें जीवको प्राप्त होता है ऐसा तात्पर्यार्थ है।" इस प्रकार सुनकर राजाने कहा कि:-हे भगवन्! क्या वह संसारी जीव बार २ सर्व विरती कन्याको स्विकार कर चारित्र-धर्म महाराजाकी सैन्यका सहायक होवेगा।" तब केवली भगवंत बोले कि:-"इस सम्बन्धमें तो अभी बहुत कहनेका है इसलिये हे राजन्! सावधानहोकर सुन।" राजाने कहा कि:-"हे भगवंत! मैंतो सावधानही हूँ इसलिये आप कृपाकरके कहो।" तब केवली महाराज बोले :—

हे राजन्! इस मनुष्यक्षेत्रमें इन्द्रपुर नामका नगर है वहां समीरण नामका राजा है और उसके जयन्ती नामकी

भार्या है। एक समय कर्मपरिणाम राजाने उस संसारी जीवको वहां लाकर उसके पुत्ररूप उत्पन्न किया॥ उसका अरविंद ऐसा नाम रखा वह सब कला पढ़कर यौवन अवस्थाको प्राप्त हुआ। मौकापाकर कर्मराजाने वहां गुरू महाराजको लाकर बगीचेमें घूमते हुए अरविन्द कुमारको उनके दर्शन कराये, फिर वह कुमार उनके पास गया और हर्षपूर्वक प्रणाम करके बैठा, तब कर्मराजाने उसको शुद्धतमाध्यवसायरूप तलवार दी, उससे उसने मोहादि शत्रुओंके संख्याता सागरोपमकी स्थिति रूप शरीर भाग को छेदडाला। फिर गुरू महाराजने सम्यग्दर्शन और चारित्रधर्मका उपदेश करके उसके पास सर्व विरति कन्या के गुणोंका वर्णन किया। वैराग्यके अनुरागसे मातपितादि सबके संगको छोड़कर गुरूके दियेहुए वेषसे परम विभूतिपूर्वक अरविंदकुमारने उस चारित्रकन्यासे शादी की। इससे धर्मराजाका समस्त सैन्य प्रमुदित हुआ। सद्बोध आनन्द पाकरके उसके पास रहा, सम्यग्दर्शन स्थिर हुआ, सदागमका प्रतिदिन परिचय होनेलगा। प्रत्युपेक्षणादि क्रियाओं पास आनेलगी, प्रशमसे वह

विभूषित हुआ, मार्दवसे मण्डित हुआ, आर्जवसे सुशोभित हुआ, संतोषसे अलंकृत हुआ, वह तपका अतिशय परिचय करनेलगा, संयमके साथ खेलनेलगा सत्यपक्षका प्रेम हुआ, शौचसे भावित हुआ और अकिञ्चन, ब्रह्मचर्यादि सतत् उसके पास रहने लगे। इस प्रकार इनके मिलापसे और सद्बोध तथा सदागमसे प्राप्त होनेके उत्साहसे वह प्रतिदिन मोहसैन्यका नाश करनेलगा। किसी समय अप्रमाद नामका गन्ध हस्ती पर चढ़ा, शुद्ध मनोवृत्तिरूप बाण छोड़कर मोहादिकके ऊपर प्रहार करता, मोह महीपतिके मर्मस्थानको वींधता, मदनरूप माण्डलिकके हृदयमें मारता, राग केसरीको वेहोश रखता और द्वेष गजेन्द्रको अरांटा कराता 'तेरे प्रमाणोंका शत्रु है और यह तेरा इस तरह शत्रु होता है' इस प्रकार पास रहे हुए सदबोध और सदागमने पहिचान कराए हुए दूसरे वैश्वानर, शैलराज, बहुली, सागर, हिंसा, मृषावाद, स्तेय, मैथुन और मूर्छादिक शत्रुओंको वह अहर्निश सताता था। किसी २ समय एकदम सामने आकर खड़ा हुआ प्रमादरिपु उसको झुका देताथा परन्तु फिर स्थिर होकर

ख्यानावरण क्रोधने उसके शरीरमें प्रवेशकर, उसके मर्म-स्थानको पकड़कर उसको दुःख दिया। उस दुःखके वशसे वह गुरू के सामने कहनेलगा, " हे आचार्य ! मेंने क्या बिगाड़ा ? जो आप विचारकरो तो मेरा कुछभी अपराध नहीं है फिर ऐसे बोलते आपको कौन अटका सकता है। आप मुझ अकेले काही क्यों दोष निकालते हो ? दूसरे किसीको नहीं निषेधते ? क्या गच्छमें कोई दूसरे इसप्रकार नहीं करते ? मेरे साथ दीक्षितहुए सब इस प्रकारही करते हैं"। आचार्यके सामने इसप्रकार बोलना सुनकर स्थविर उसको शिक्षा देनेलगे कि:-" हे महाभाग ! तू श्रेष्ठ राजकुलमें पैदा हुआ है इसलिये तेरेको गुरूके सामने इसप्रकार अवज्ञापूर्वक बोलना योग्य नहीं"। ऐसा कहने से 'यह मेरे कुलको निन्दते हैं' इत्यादि विपरीत अर्थ लेकर उल्टा अत्यन्त क्रोध और अहंकारसे भरगया। उस के बाद फिर गुरूने उसको कुछ शिक्षा दी। इससे वह तुरन्त बोला कि:-" अहो ! आप सब मेरेको हेरान करने लगे हो इसलिये तुम्हारे रजोहरण आदि लेलो "। इस तरह बोलकर वेषको छोड़कर, बलात्कारसे गला पकड़कर

अप्रत्याख्यानावरण क्रोध और मान सुभटोंने उसको मोह सैन्यको सौंपा। इससे क्रोधित होकर सब सैनिकोंने मिलकर उसको गृहस्थ वेष लेवाकर प्रतिग्राम और प्रति-घर धिक्कार दिलाते दूसरोंके घर काम कराते और भिक्षाके लिये भटकाते फिरे, 'यह पापिष्ठ और भ्रष्टबुद्धिवाला ऐसा मैंने उभयलोकमें एकान्त दुःखकार आचरण अङ्गीकार किया, उसके फलका अब अनुभव करता हूँ' इत्यादि आत्माकी निन्दा करताहुआ मरकर ज्योतिषी देवमें उत्पन्नहुआ और वहांसे चलकर बहुत भव फिरा।

फिर राजपूर नगरमें परमश्रावक ऐसा महर्द्धिक प्रधा-नके घर वह पुत्ररूप उत्पन्न हुआ, वहां उसका नाम चित्र-पती रखा। माता–पिताके मरने पर अपने पुत्रको सब सौंप करके संवेगयुक्त चित्तसे सदगुरूके पास मोहसैन्यको नाश करतेहुए बहुतदिनोंतक व्रत पाळा। आखिर विषय, सुख, शीलता और प्रमादसे पराभव पाकर संयमकी विरा-धना करके सौधर्म देवलोकमें एक पल्योपमका आयुष्य-वाला, हीन ऋद्धिवाला देव हुआ। वहांसे फिर चलकर

अप्रत्याख्यानावरण क्रोध और मान सुभटोंने उसको मोह सैन्दको सोंपा। इससे क्रोधित होकर सब सैनिकोंने मिलकर उसको गृहस्थ वेष लेवाकर प्रतिग्राम और प्रति-घर धिक्कार दिलाते दूसरोंके घर काम कराते और भिक्षाके लिये भटकाते फिरे, 'यह पापिष्ठ और भ्रष्टबुद्धिवाला ऐसा मैंने उभयलोकमें एकान्त दुःखकार आचरण अङ्गीकार किया, उसके फलका अब अनुभव करता हूँ' इत्यादि आत्माकी निन्दा करताहुआ मरकर ज्योतिषी देवमें उत्पन्नहुआ और वहांसे चलकर बहुत भव फिरा।

फिर राजपूर नगरमें परमश्रावक ऐसा महर्द्धिक प्रधा-नके घर वह पुत्ररूप उत्पन्न हुआ, वहां उसका नाम चित्र-पती रखा। माता-पिताके मरने पर अपने पुत्रको सब सोंप करके संवेगयुक्त चित्तसे सद्गुरूके पास मोहसैन्यको नाश करतेहुए बहुतदिनोंतक व्रत पाला। आखिर विषय, सुख, शीलता और प्रमादसे पराभव पाकर संयमकी विरा-धना करके सौधर्म देवलोकमें एक पल्योपमका आयुष्य-वाला, हीन ऋद्धिवाला देव हुआ। वहांसे फिर चलकर

संसारमें फिरकर एक समय कांचनपूर नगरमें क्षेमकर राजाके विजयसेन नामका पुत्र हुआ। वहां सद्गुरुके पाससे धर्म सुनकर मात-पितादिका त्याग कर पुर्ववत् सर्व विरति कन्याका पाणि ग्रहण कर उसने जिन दीक्षा अङ्गीकार की, इससे प्रथम माफिक सद्बोध और सदागम आदि हर्षित हुए फिर पूर्ववत मोहसैन्यके साथ उसने महायुद्ध किया। धीरे २ सदागमका अति परिचय हुआ, सद्बोध अति निविड़ होतेहुए, अप्रमाद एकीभाव पातेहुए और संतोष निश्चल होतेहुए विजयसेन साधु सिद्धिप्रसादका अप्रमत्त गुणस्थान नामका सातवें पङ्गथियेपर चढ़ा। वहां कर्मपरिणाम राजाकी अनुकूलतासे उसको उपशम श्रेणी नामका वज्रदण्ड मिला। फिर अनादिकालका महावैरी ऐसा अनन्तानुबंधी क्रोध, मान, माया और लोभ इन चार के मस्तकमें प्रहारकर घायल करके नीचे डालदिये और भस्मके पुंजमें रहाहुआ अग्निकणके जैसा उनको नीचेष्ट बना दिये। फिर विशुद्ध, अर्धविशुद्ध और अविशुद्ध ऐसे तीन रूपधारी मिथ्यादर्शनको इस तरहसे घायल किया कि वह मूर्च्छित होकर नीचे गिरगया, फिर वह अपूर्व

करण गुणस्थान नामके सिद्ध सोधन आठवें पंगथिये पर चढ़ा। वहांसे अनिवृत्तिवाद रसपरायन नामके नवमें पंगथियेपर गया। वहां नपुंसक वेदको घायल करके मूर्च्छित किया, फिर स्त्री-वेदको और उसके बाद हास्य, रति, अरति, भय, शोक और जुगुप्सा इन छः शत्रुओंको घायल किया। फिर पुरुष-वेद और अप्रत्याख्यान तथा प्रत्याख्यानावरण नामके दो क्रोधरिपुको और संज्वलन क्रोधको घायल करके निचेष्ट बनादिया। फिर अप्रत्याख्यान तथा प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन मान, अप्रत्याख्यान तथा प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन माया और अप्रत्याख्यानावरण और संज्वलन लोभ इन सबको अनुक्रमसे गिराकर मूर्च्छित किया, परन्तु उनमेसे संज्वलन लोभ घायल होते २ भगकर सूक्ष्म संपदाय नामके दशवें पंगथियेके अन्दर छुपगया। वहांपरभी उसके पीछेजाकर उसको गिरादिया और मूर्च्छित करदीया।

फिर उपरोक्त अपने कुटम्बके अट्ठवीश मनुष्योंके पतनसे जैसे मूल, स्कंध और शाखादिक के पड़नेसे

वृक्ष गिरजाता है वैसेही कुटम्ब मय शरीरके जीववाला मोहराजा मूर्च्छित होकर पड़ा। उपशम श्रेणीरूप महावज्र दण्डसे घायल होते हुए सकुटम्ब मोहमहाचरट मूर्च्छित होगया। इससे विजयसेन साधु निराकुल होकर परमानन्द सुख का अनुभव करते सिद्धि सौधका उपशान्त मोह गुण स्थाननाम के ग्यारवें बड़े पङ्गथियेपर चढ़ा वहां अनुत्तर विमान में जाने योग्य और केवली समान विशुद्ध चारित्रवाला ऐसा वह देवताओं को पूजनीय पदको प्राप्त होतेहुए अंतर्मुहूर्त्त वहां रहा, इतने में कुछ चेतकर क्रोधित होकर ऐसे संज्वलन लोभ ने अपने शरीर से भी अति वल्लभ ऐसी देहोपकरण मूर्च्छा नाम की अपनी पुत्री को उसके पास भेजी, उसने अत्यन्त क्रोधित होकर मात्र देहकीही मूर्च्छा कराई, गलेसे पकड़कर ग्यारवें से दशवें पङ्गथिये पर डालकर क्रम से इस तरह पीछे पड़ा कि वह ठेट पहिले पंगथिये तक उतर गया और उसको लेजाकर महादुष्ट ऐसा मिथ्यादर्शन सचीव को सौंपदिया! उस समय पहिले घायल किये हुए सब शत्रु सावधान और क्रोधित होकर पीछे आतेहुए

विजयसेन के पीछे लगे और उसके पाससे बहुत पाप कराकर एकेन्द्रियादिक में उसको लेगये, और नर्कगति वगैरा में लेजाकर बहुत संसार में फिराया।

वह फिर एक समय मनुष्य भूमिमें ब्रह्मपुर नामके नगरमें परम श्रावक अपरिमित ऋद्धिका नायक और समस्त नागरिकोंमें अग्रसर ऐसा सुनन्द नामका शेठ रहताथा। उसके धन्या नाम की भार्या थी, उसका वह संसारी जीव पुण्डरिक नामका पुत्र हुआ, उस भव में वह अतिशय प्रज्ञा प्राप्त होकर वहां से थोड़े ही दिनों में समस्त कला सिखगया, फिर 'यह तो थोड़ा ही पढ़ने का हुआ' ऐसा विचार कर इतने अभ्यास से असन्तुष्ट होकर किसी साधुको उसने पूछाः-"इन कलाओंका महान वि· स्तार कहां है" उसने कहा कि "द्वादशांगयो-रह चौदह पूर्व में उसका विस्तार है" उसने पूछा कि.-"उन दोनों का कितना विस्तार है" साधुने कहा किः-"गुरू महाराज को पुछो, फिर उसने गुरू महाराज को पूछा, इससे उन्हो ने पूर्ववत् विस्तार सब कहा, इससे उसने गुरूमहाराज

से कहा कि.—"हे प्रभो! अनुग्रह करके प्रथम पूर्व मेरे को पढ़ाओ, गुरु बोले कि:-"वे साधु ही पढ़ सकते हैं। गृहस्थों को पढ़ाने का अधिकार नहीं है" इससे उसने कहा तो मेरेको साधु व्रत दो" फिर माता-पिता की आज्ञा लेकर गुरु महाराज के पास दीक्षा ली, तब बुद्धि के प्रभाव से उसने सब शिक्षा उसी वक्त ग्रहण करली और थोड़े-ही दिनों में वह चौदह पूर्व पढ़ गया।

अब यहां अपनी सभा में बैठे हुए मोहचरट ने एक निश्वास डाला, इससे सभासदोंने पूछा कि:-हे देव! यह क्या"? इस प्रश्न को सुनकर उसने हाथके तले के नीचे अपने ललाट भागको आघात कर के बोला:-"अरे अपन मरगये क्यों कि अपना महावैरी सदागम का इस संसारी जीवने सर्व तरहसे संग्रह करलिया वास्ते यह अपना सब मर्म कहदेगा तो यह संसारी जीव तथा दूसरे सब लोग उसको जानलेंगे, जिससे पुत्र और गोत्र सहित अपना मूल उखाड़डालेंगे, तब ऐसा कोई मेरे देखनेमें नहीं आता जो इसे दुष्ट संयोग से भ्रष्ट करे" इस प्रकार

दुःख से बोलते हुए अपने स्वामी को देखकर, आलस्य, वैकल्य, अङ्गभङ्ग, मुख मोटन, प्रभा, स्वप्न दर्शन, स्मृति भ्रंश आदि अपने परिवार सहित निद्रा बाईं तरफ खड़ी हुई, हाथ जोड़कर कहनेलगीः-"हे देव! अभी तो आप की दासीही साध्य होसकती है, इसलिये इतना ज्यादे दुःख क्यों करतेहो? अभी तो कलंकी मूर्च्छित कर ग्यारवें पङ्क्तिये से नीचे डालदियाथा सो क्या आपके जानने में नहीं आया? इसलिये अब आप मेरी कला कौशल देखो"। तब मोहमहिपाल ने हंसकर कहा कि:- "हे वत्से! तू जा और तेरा कार्य सिद्ध कर"। फिर वह परिवार सहित चौदह पूर्वधर ऐसे उन मुनि के पास गई, और आरम्भसे ही आलस्य को उसके शरीर में उतारा; उसके प्रताप से उसको सूत्र पुनरावर्तन की रुचि कमहुई, सूत्रको अर्थचिंतन करनेमें उसको कंटाला आनेलगा, इस प्रकार दो तीन दिन बीते, इतनेमें स्थविरोने उसको प्रेरणा करके बलात्कार से पूर्वपाठ की गुणना करनेके लिये बैठाया; इतनेमें निद्रा ने अपना दूसरा परिवार भेजा; इससे उसको जम्भाईयाँ आनेलगी,

पीठ मरोड़नेलगा भुजाए ऊँची करनेलगा, अंगुलियों को मरोड़नेलगा, पाँव आदि शरीर के भाग को मरोड़-नेलगा, इतने में निद्रा ने उसको पकड़कर नीचे नमा-दिया (अर्थात निद्रा वश होगया) और उसके सामने पीछे और वगलमें और सर्वत्र वह फिरने लगी, इस प्रकार सबोने मिलकर गलेसे पकड़ा, इससे ऐसे यत्न से पढ़ते हुए स्थविर के मुहमेंसे एक अक्षर भी नहीं निकला, फिर रात होते ही वह निद्रा के पूर्ण वशमेंहोगया याने भूमि के प्रमार्जन विना तथा विस्तर विनाही काष्ट की तरह अचेत घोर निद्रामें पड़ारहता और प्रातः प्रतिक्रमणके समय वड़े कष्ट से उठता, इसतरह वहुत दिन होने से एक दिन स्थविरोंने पास आकर उसको ऊँचा करके सूत्र परावर्त्तन पर वैठाया, इससे निद्राने नीचे गिरा कर उसकी दोनो जाँघे तोड़डाली दोनों कोनिये रगड़-डाली और सिर फोड़डाला, इस प्रकार होने से वह कुछ भी नहीं वोल सका, इससे एक स्थानपर वैठारहा, फिर निद्रासे अति व्याप्त होनेसे प्रतिक्रमणादि क्रिया के समय उसको वहुत मुखविकारसे नानाप्रकारके नेत्र भंग से

और विचित्र प्रकार के हस्त पादके विक्षेपसे निद्रा नचाती थीं, इस प्रकार वह अपने स्वरूप को सब लोगों के देखने योग्य बनादेता, जितेन्द्रिय तथा तत्वज्ञ लोगों को भी क्षणभर हँसाता "यह क्या" इसप्रकार महा विस्मय करता था, इस प्रकार उसको निद्राने वशमें करलिया इससे परावर्त्तन और चिन्ता न करने से सछिद्र हस्तमें रहा हुआ जल के सदृश उसका श्रुत निरन्तर विगलित होनेलगा, सूक्ष्म और गहन अर्थ सब छोड़दिए, फिर जैसे२ उसके सूत्रों से भ्रंश होतागया वैसे बेफिकर होकर वह निद्रा सुख का अनुभव करनेलगा, सचमुच वह विषसे भी ज्यादे भयङ्कर होनेपरभी अज्ञान से उसको अमृत समान मानता ऐसा वह रातदिन यहाँ तक निर्भय होकर उंघता कि वह अखीर समस्त श्रुत भूलगया।

फिर एक समय गुरूने उसको कहा किः- "हे वत्स पुण्डरीक मुनि ! पहिले तेने उत्साह से श्रुताध्ययन के लिये ही यह व्रत अङ्गीकार किया और फिर नर्कादिक दुःख निवारक तथा मोक्ष सम्बधी सुख समूह के अनेक

गुरू रूप ऐसे जैन भणित श्रुतरत्न का अभ्यास किया, अब नर्क, तिर्यञ्च, अमर और मनुष्य सम्बंधी सुख दुःख का एक कारण रूप ऐसा लव मात्र निद्रा सुख में अत्यासक्त होकर हे भद्र ! उनको क्यो वृथा खोदेता है ?" तब ढीट होकर उसने कहा कि:- "हे भगवन् ! कोन निद्रा में आसक्त है ? तुमको किसीने असत्य कहा है क्योंकि मैने तो कल इतनाही गिनाथा" इससे गुरूमहाराज ने विचार किया कि:-"अहो यह और भी विशेषवात हुई कि यह प्रत्यक्ष को भी छिपाता है और सत्य नहीं बोलता"

फिर एक समय मानो विष से घूलाहुआ हो अथवा प्रहार से मुर्च्छित हुआ हो ऐसी स्थिति में बोलते हुए भी जवाब नहीं देता, दिनको भी नाना प्रकार के स्वप्नों को देखता, मुह से बेकाम ऐसे अनेक शौर बकता और गहरी निद्रामें सोयेहुए को गुरू महाराजने बहुत प्रयत्न से जगाकर कहा कि:-"पुण्डरीक तू कहता है कि मैं सोया नहीं तो फिर यह क्या" वह बोला कि:-"यह क्या ? सचमुच मैं सोयाहूँ । यह आपकी भ्रान्ति है सिर्फ निश्चित

होकर अभी मैं सूत्र की ही गणना कर रहाथा और अर्थ काही मनमें विचार करताहूँ" ऐसे उत्तर से 'यह बाहर विशेष झूंठ बोलनेवाला है "ऐसा धारकर गुरु माहराज तथा सब साधु उससे विरक्त होगये, और अब ज्यादे प्रेरणा करने से यह विशेष झूंठ बोलेगा और ज्यादे द्वेष करेगा। ऐसा विचार कर सबोंने उसकी उपेक्षा करदी,फिर एक के बाद एक मोहराजा के भेजेहुए नये २ सुभट उसके पास आनेलगे, इससे विमुखता को प्राप्त होकर ऐसा सदागम उससे सर्वथा दूर होगया, चारित्र धर्म सहित सद्बोध चला-गया और सर्व विरतितो विरक्त होकर चलती बनी, उसके पीछे सम्यग्दर्शन भी भगगया, इससे मौका पाकर मिथ्या-दर्शन अपनी सत्ता चलाने को तैयार हुआ, फिर मोहराजा के सब सुभटोंने मिलकर अंत कालतक उसको निद्रके ध्यान मेही मृत्यु के आधीन करदिया और निगोद एकेन्द्रियादिक में लेजाकर डालदिया। इसतरह से अनन्त काल तक संसार में फिराया।

अब यहां चित्त वृति नामकी महा अटवीमें विवेक गिरिके

अप्रमत्त नामका शिखरपर बसाहुआ जैनपुर नाम के नगर में चारित्र धर्म राजा आदि सब आनन्द और उत्साह रहित होकर इकट्ठे हुए। और वहां बैठकर विचार करनेलगे कि :-"अहो ! देखो तो सही यह क्या हो रहा है? मोहचरट ने अनेक भव्य और दूर भव्यों को तो अपने सहायक बना दिये हैं। वे तो सब जगह अपने पक्षको तो मूलसेही नाश करते फिरते हैं। अपनो को तो यह एक ही सहायक मिला है, वह भी नजाने कितने समय बाद मिलेगा,जबकी अपन किसी तरह इसको अच्छे ऊँचे गुणों में स्थापन करते हैं जिससे कि वह कुछ अपनो को सहायता देवे, उतने में तो उस महाभाग को कोई ऐसा भ्रम उत्पन्न होजाता है कि जिससे वह फिर मोहादिक शत्रुओंके साथ मिलजाता है और उसको पहिले ही की तरह अत्यन्त दुःखित करके बिडम्बना देते हैं अपनो को तो सिर्फ उसको सुखी करनेका यत्न करना चाहिये, परन्तु विपर्यास भाव प्राप्त किया हुआ वह इतना भी नहीं जानसकता है। देखो!उपशान्त मोह और चोदह पुर्वधर आदि के पदपर स्थापना करदेने पर भी वहां से पीछा पडके मोहादि महादुष्टों के साथ वह मिलजाता है

वहां अपना क्या कहना और क्या देखना" फिर सद्बोध हंसकर बोला, "अरे तुम बेफायदा रंज करते हो, इससे नई बात क्या है। क्योंकि अनादिकाल से यह व्यवहार चलाआता है, तुम हितकर होतेहुए और उसको उच्चपद पर स्थापना करतेहुए जिस संसारी जीवको भवसागर में अतिशय फिरने का होता है, वह उपशांत मोह गुण-स्थान के आतेहुए और चौदह पुर्वधर पदपर होतेहुए भी वहां से पीछा पड़कर पूर्व श॰ओं से मिलकर उत्कृष्ट कुछ कम अर्धपुद्गल परावर्त्त प्रमाण संसारमें फिरता है। अनादिकाल से जीवोंका यह निश्चिन्त व्यवहार है। इसलिये आश्चर्य करनेका क्या काम है ? तुम्हारे वशमें होकर कोई पीछा नहींपड़े ऐसा कुछ नियम नहीं, इसलिये तट स्थ होकर सिर्फ देखते हुए बैठे रहते क्यों नहीं ? तुमको मिथ्याभिमान मात्र इतनाही है कि इसकी कुछ सहायता से अपने शत्रु पक्ष का क्षय करके किसी तरह प्रसिद्ध होकर और उसको सुखी करें, यह अपनी धारणा जबही सफल होगा जबकि सुखी होगा। अपन यह विचारते हैं कि "अपने को एकही सहायक मिला है" परन्तु ऐसा विचार

मनमें लाने की जरूरत नहीं है क्योंकि जिसको बहुत सहायक हैं ऐसा वह मोहादिक तुमको सिर्फ अटकाने को समर्थ है, तुमतो एक सहायकवाले होतेहुए शत्रुओं का सर्वथा क्षय कर सकतेहो। इसलिये यह एकही जो पराक्रम करेगा वह तुम देखोगे." सद्बोध का कहना सुनकर सब बोलेः "अहो! सद्बोध का कहना सच्चा है" वे इस प्रकार बात कर रहेथे इतनेमें कर्मपरिणाम राजने उनको कहाः- "उस तुम्हारे सहायकको मैंने मनुष्य क्षेत्र में आया हुआ पद्मस्थल नगर में सिंह विक्रम महानरेन्द्र की कमलिनी नामकी पत्नी के पुत्ररूप उत्पन्न किया है और उसका सिंहरथ नाम रखाहै। इसलिये तुमको महाबधाँपनक का देताहूँ, क्यों कि इस जन्म में वह सिर्फ तुम्हारे पक्षकाही पोषण करेगा और सद्बोध तथा महागम ने प्रगट किये हुए गुणों की श्रेणी पर चढ़तेहुए कोई उसको नीचे गिराने में समर्थ नहीं है। इस भव में तुमको केवल पुण्योदयही सहायक दिया, है वह संसारी जीव सब प्रकार उसका ही पोषण करेगा पापोदय का पोषण नहीं करेगा, इससे अब निवृत्ति पुरी में प्रवेश करने तक मोह शत्रुओं के यह बिलकुल वश

में होने वाला नहीं।

कर्मपरिणाम राजा के इस प्रकार वचन सुनकर सम्यग्दर्शनादि सब आनन्द पातेहुए उठे और जैनेन्द्रपुर में गये-वहां उनलोगों के पास सब जगह हर एक घरके द्वारपर तोरण बँधाते हुए, कमलों से आच्छादित करके, सोनेके कलश तरतीबवार रखके, दुकानों की शौभाके लिये ऊंचे बाँसों पर आगेके हिस्से पर कीमती वस्त्र लटकाके, कस्तूरी घनसार से मिश्रित करके चन्दनरस से राज मार्गों को सिंचन कराके, ढेर किये हुए सुवर्ण और रत्नों का महादान दिलाकर, अभय-दान कराकर, बाजे बजाकर और नये २ नाटक कराकर अपना आनन्द प्रदर्शित करनेलगे।

अब यहां सिद्धरथ बाल्यावस्था सेही अत्यन्त हर्ष पूर्वक देवों को नमस्कार करताहुआ, गुरुमहाराज को वन्दन करताहुआ, पिताके साथ जिन मन्दिरों में जाता, वहां स्नात्रादिक देखकर खुश होता, मुनि दर्शन से सन्तुष्ट

होता, उनके वचन सुनकर आनन्द मनाता और उनको अशन आदि का दान देकर सन्तुष्ट होताथा। इस प्रकार पुण्योदय हमेशा उसका पोषण करनेलगा और उसके सन्निधानसे वह थोड़ेही समय में सब कला सिखगया। जब कि वह युवावस्थामें आया तो कामदेव से भी ज्यादे रूपवान् होगया और नूतन-उत्पन्न हुए रूप से भी अतिशय क्रान्तीवान् हुआ तो भी वह विषयों से अलग रहता, स्त्रियोंकी कथाभी उसको अच्छी नहीं लगती, उसके साथ मन लगाने की भी इच्छा नहीं होती, सिर्फ, मुनियों कीही वह सेवा करता, उनसे धर्म शात्र सुनकर संसार के स्वरूप को विचारता, संसारसे प्रतिक्षण अलग रहता और पल २ पर मोक्ष सुख की इच्छा करता।

एक समय चार ज्ञानधारी, गुणनिधान नाम के आचार्य्य महाराज वहां पधारे, उनके पाससे विशेष धर्म का विस्तार सुनकर, माता-पिता को युक्ति पूर्वक समझाकर, संसार का त्यागकर पूर्व कथित विधिसे महाविभूति पूर्वक सिंहरथ कुमारने उनके पास से दिक्षाली। इससे

चारित्रधर्म के सब सैनिक हँसतेहुए उनके परिवार रूप होगये, सारे त्रिभुवन के साम्राज्य को देनेवाली ऐसी सर्व विरति उनपर अत्यन्त अनुरक्त हुई। सद्बोध अविच्छिन्नपन तो उसके पासही रहनेलगा और सम्यग्दर्शन का सम्बन्ध तो उसको देह और जीव के समान प्राप्त हुआ, फिर शमरूप महाकवच को धारणकर संतोष रूप टोप पहिनकर, सद्भावनारूप किल्लेमें प्रवेशकर, पूर्व प्रकार ही अप्रमाद रूप महा हस्तीपर आरूढ़हो, अट्ठारह हजार शीलाङ्ग अंगरक्षक से रक्षित हो, प्रति दिन वृद्धि पातेहुए पुण्योदय रूप महादण्ड नायक को जिस के आगे किया हुआ है और प्रतिक्षण उल्लसायमान असंख्य शुभ अध्यवसायरूप पदातियोंसे जो परिवृत्त हुआ है। ऐसा सिंहरथ साधु मोह सैन्य के साथ युद्ध करने को प्रवृत्त हुआ, वहां वह अमूढ़तत्व नामका तीक्ष्ण भाले के अग्रभाग से मोह महाचरट के हृदय को हमेशा छेदता हुआ तथा एक समय ज्ञानदर्शन और चारित्ररूप त्रिशूलसे रागकेसरी, द्वेषगजेन्द्र और कामदेव रूप महामाण्डलिकों के छाती में ताड़ना करता, सर्वजीव

दयाका परिणामरूप बांणसे हिंसाध्यवसाय रूप सामन्त को नष्टकरता, सत्यभाषणरूप मुग्दर से मृषावाद चरट के मस्तकका चूरकरता, शौचरूप भाले से स्तेय महादुष्ट के हृदय को भेदता, ब्रह्मचर्यरूप अग्यस्त्र से तंग सदृश मैथुन को जलाता, निरिच्छपणारूप महागदासे परिग्रह महासामन्त का दलन करता, क्रोध योद्धाको उसके वैगु-ण्य चिन्तन रूप मुगदूर से खीलदेता, मार्दव दण्डसे मान सामन्त को भग्न करता, ऋजुता वरछी के प्रक्षेप से मायारूप पृथ्विको उखाड़कर दूर डालदेता, सन्तुष्टता रूप अभिघातसे लोभ के शिरको फोड़ता और सत्यका अच्छी तरह से अवलम्बन करके देह निःसारत्व चिन्तना-दिक शस्त्रों से लीलामात्र में परीसहोको पराजित करते हुए शोभायमान होनेलगा । इस प्रकार सर्वत्र अस्खलित प्रतापसे मोह सैन्य को नाश करते हुए, उसने बहुत समय व्यतीत किया ।

फिर सब शत्रुओंका नाशकर निःसत्व और नष्ट प्राय होतेहुए सम्यग्दर्शन संतोष पूर्वक अत्यन्त विकाशमान

होता, अति हर्ष पूर्वक सदागम की वृद्धि होतेहुए क्रिया कलाप का सम्यक प्रकार से आराधना करते हुए, बहुत भव्यप्राणियोंको प्रतिबोध देकर, मोहराजा की विडम्बना से मुक्त करतेहुए बहुत शिष्योंको शिक्षित करते हुए और पुण्योदय को अति पुष्ट करताहुआ, सिद्धरथ साधु ने अपना अन्तसमय नजदीक जानकर द्रव्यसे और भाव से संलेखना की, फिर गीतार्थ तपस्वी साधुओं के साथ वह किसी पर्वत के ऊँचे प्रदेशपर गया, वहां विपुल शिलातलको प्रमाजीकर उसके ऊपर दर्भमय आसन बिछाया। वहां अन्त समय तक बैठेहुए ऐसे उनके मस्तकपर हस्त जोड़कर शक्रस्तव से समस्त तीर्थंकरों की वंदना की, फिर वर्त्तमान तीर्थंकरों को और फिर अपने गुरू को बन्दना की, और उनके पास पहिले प्रत्याख्यान किये हुए अट्ठारा पापस्थानका प्रत्याख्यान किया, चतुर्विध आहारका त्याग किया और शरीरका प्रतिबन्धही छोड़ दिया, इस प्रकार सब पापों को छोड़कर उसकी आलोचनाकी और सर्व आहार का प्रत्याख्यान कर, देव, मनुष्य और तिर्यञ्च सम्बन्धी उपसर्गोंका सहन करताहुआ एक

महिनेतक पादपोपगमन अनशन में स्थित रहकर, चरम श्वासोच्छ्वास तक साधु धर्म को निष्कलंक पालकर, समाधि पूर्वक कालकर महाशुक्र नामका सातवें देवलोक में सत्तर सागरोपम का आयुष्यवाला इन्द्रके समान महर्द्धिक देवता हुआ।

वहांभी तीर्थंकरादि के समवसरणकी रचना तथा नन्दीश्वरादि तीर्थोको जाकर अट्ठाई महोत्सवादि करते हुए, अतिशय पुण्योदयका पोषण करके और दिव्य महाभोग भोगकर आयुष्यका क्षय करतेहुए, वहां से आकर पूर्व महाविदेह में कमलाकर नामके नगरमें श्रीचन्द्र नरेन्द्रकी कमला नामकी राणीका भानु नामका पुत्र उत्पन्न हुआ, वहां भी सद्बोध और सम्यग्दर्शनको प्राप्त कर बाल्यावस्था मेंही धर्म प्रेमी बनकर पुण्योदय का उसने अतिशय पोषण किया। एक समय पिताके मरने पर राज्यपद स्वीकार, न्याय से चिरकाल राज भोगकर देवताओंको भी श्लाघ्य ऐसे श्रावक धर्मको पाल कर, समयपर पुत्र को राज्य दे भानुराजाने सद्गुरुके पाससे

महाविभूति पूर्वक दीक्षाली। जिससे चारित्रधर्म राजाके समस्त सैन्य हर्षित हुए, फिर सदागमको अति परिचित करके, पूर्वोक्त विधिसेही मोहसैन्यका दलनकर, पुण्योदय को ज्यादे पुष्ट बनाकर, चिरकाल तक अकलंक चारित्र पालकर, मोहसैन्यका क्षय होनेसे पूर्ववत अनशन करने के लिये समाधि प्राप्त करके नवमें ग्रैवेयकमें देव पनको उत्पन्न हुआ, वहां इकतीस सागरोपम प्रमाण आयु पाल· कर वहांसे चलकर पूर्व विदेह में पद्मकुण्ड नामके नगर में सीमन्त नामके राजाके ईन्द्रदत्त नामका पुत्र हुआ। वहां भी महानरेन्द्रके भोग २ कर पूर्व प्रमाणे साधुपना अंगीकार कर मोहबल बहुत क्षीण होतेहुए और पुण्योदय अति पुष्ट होतेहुए पूर्वोक्त अनशन विधिसे ही समाधि पाकरके वह सर्वार्थ सिद्धि विमान में परमर्द्धिक अहमिन्द देव हुआ।

अब यहां इसी गंधिलावती विजयमें विलासवेष और विभूतिसे ईन्द्रपुरी के जैसी, चन्द्रपुरी नामकी महा नगरी है वहां नमस्कार करते हुए अनेक राजाओंको

अपने मुकुटसे जैसे चरण-कमलको सुशोभित किया है ऐसा तथा शक्ति समृद्धि और सौंदर्यादिकसे इन्द्रसमान अकलंक नामका महानरेन्द्र था। श्रीमज्जिनेंद्रके चरण युगल रूप कमलमें मधुकर समान ऐसे राजाको चन्द्रके किरणों के समान निर्मल सम्यक्त्व वाली सुदर्शना नामकी पट-राणी थी।

एक समय लगभग रात्रीके अन्त भागमें उस महाराणी ने मुखमे प्रवेश करते हुए चन्द्रके किरणोंके समान निर्मल सिंहको देखा, उस समय गर्भ में सुरेन्द्रदत्त मुनिका जीव सर्वार्थ सिद्ध विमानसे तेंतीश सागरोपम की आयुष्य पूर्व कर पुत्र पने उत्पन्न हुआ। राणीने हर्षित होकर स्वप्नकी बात राजाको निवेदनकी। राजाने नैमित्तियोंको पूछा जब उन्होने कहा कि:-"हे देव! तुमको सिंह समान पराक्रमी मन्दराचलसे मथन करता क्षीर समुद्रके फेनके पिण्डसमान:अपने यशोविस्तारसे दिशाओंको सफेद करने वाला और सकल भूमण्डलका भोक्ता ऐसा पुत्र होगा" राजाने सन्तुष्ट होकर नैमित्तियोंको अच्छा इनाम देकर

हर्षित करके विदाकिये, फिर राणी आनन्दित होकर सुख पूर्वक गर्भका परिपालन करनेलगी, देवपूजा, अभयदान, आदि दोहला जिसका संपूर्ण करनेमें आया है। ऐसी उस रानी के गर्भ स्थिति सम्पूर्ण होतेही रत्न के पुञ्ज जैसी अपनी प्रभाके विस्तारसे सूतिका गृहको जिसने उद्योतित कर दिया है। ऐसे पुत्रको प्रसन्नतासे जन्मदिया, तब हर्षके प्रकर्षसे परिपुष्ट होकर तथा जिसके स्तनतट पर मोतीकी माला उछलरहीथी, ऐसी चन्द्रधारा नामकी दासीने राजाको निवेदन कियाकि, हेनाथ! आपके पुत्र रत्न उत्पन्न हुआ है। यह सुनकर अत्यन्त खुशहोकर राजा ने उसको सात पीढ़ी तक चलसके इतना तुष्टिदान दिया, फिर राजाने सारी नगरीमें आनन्दके बाजे बजाकर महान् उत्सव कराया सुवर्ण आदिका महादान दिया और सब कैदियोंको छोड़दिये।

इस प्रकार गीत, वाजित्र, नृत्य, खान, पान, प्रदान आदि प्रमोद से पुत्र जन्मके महोत्सव होरहे हैं। ऐसे समय राजाने ज्योतिःशास्त्रका परम रहस्यके जाननेवाला सिद्धार्थ

नामके ज्योतिषीको बुलाकर पूछा :—"हे आर्य ! कुमारके जन्ममें नक्षत्र और ग्रहकी स्थिति कैसी है"। तब उसने उत्तर दिया "जो ऐसीही आपकी इच्छा है तो सुनो :— यह आनन्दमय वर्ष है, शरदऋतु चलरही है, कार्त्तिक महिना है, भद्रा राशि बीज तिथि है, बृहस्पतिवार है, कृत्तिका नक्षत्र है, वृष राशि है, धृति योग है, प्रशस्त ग्रह दिखाता लग्न है, सब ग्रह ऊँचे स्थानपर रहे हुए हैं, होरा उर्ध्व मुख है, ग्यारवें स्थानमें रहाहुआ दुष्ट ग्रह मगर शुभ फल देनेवाला है। इस राशिमें इस कुमारका जन्म हुआ इसलिये हे देव ! यह विपुल लक्ष्मीवन्त और अपरिमित पराक्रमादि गुणवाला ऐसा महानरेन्द्र होगा"। फिर राजाने पूछा कि :-"हे आर्य ! यह कितनी राशि है और उनके क्या २ गुण हैं यदि तुम ठीक समझो तो कहो"। तब सिद्धार्थने कहा कि:-"हे देव ! बारा राशि होती हैं वे इस प्रकारहैः मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धन, मकर, कुम्भ और मीन, अब इनके गुण इस प्रकार हैं:—मेष राशिमें जन्माहुआ मनुष्य, चञ्चल चक्षु वाला, बलवान्, निरोगी, धर्मके लिये निश्चय करनेवाला,

पानीसे भय माननेवाला स्त्रियोंके प्रीय, कृतज्ञ, राजमान्य, प्रचण्ड कर्म करनेवाला मगर अन्तःकरणमें कोमल और प्रवासी होता है। उसकी मृत्यु अठारा वर्षमें होती है या पचीश वर्षके बाद होती है। इन दोनोंमेसे बचजाय तो एकसो वर्ष जीए और मंगलवारको वह मरता है।

वृष राशिमें जन्माहुआ मनुष्य. भोगी, दाता, पवित्र, दक्ष, गण्डस्थलमें स्थूल, महाबलवाला, धनवान, अल्पभाषी, स्थिरमन, लोकप्रिय, परोपकारी, मनोहर, बहुत पुत्रवाला, किर्तीवान्, तेजस्वी, बहुतरागी, कण्ठमें रोगी, अच्छे मित्रवाला, विलासवाली गतिसे चलनेवाला, सत्यवादी, और स्कन्ध पर मसके लान्छनवाला, ऐसे गुणोंसे युक्त होता है। और पचीस वर्षका होकर जो वह चौपायेसें नहीं मरेतो वह सौ वर्षतक जीता है। और रोहिणी नक्षत्र बुधवारको मरता है।

मिथुन राशिमें जन्माहुआ पुरुष, मिष्टान्न खानेवाला, दृष्टिमें चपल, मैथुनमें आसक्त, धनाढ्य, दयालु, कण्ठरोगी

लोकप्रीय, गायन और नाटकमें कुशल, यशस्वी, गुणी, प्रथम दुःखिहोकर पीछेसे श्रीमान होनेवाला, कुतूहली, प्रगल्भ, वेज्ञानी, गौरवर्णी, लम्बा, बोलनेमें चतुर, वाचाल, बुद्धिशाली, दृढव्रती, समर्थ, और न्यायवादी होता है। वह सोलवें वर्षमें अग्नीसे मरता है।

कर्क राशिमें जन्माहुआ पुरुष, अच्छाकाम करनेवाला धनवान, धर्मिष्ठ, गुरुभक्त, शिररोगी, महाबुद्धिमान् कृश शरीरवाला, कृतज्ञ, प्रवासी, बाल्यावय में दुःखी, अच्छे मित्र वाला. सेवकों को सेव्य, महावक्र, बहुतस्त्रियोंवाला पुत्रवाला, और हाथमें श्रीवत्स और शंखके लान्छनसे युक्त होता है। वह वीसवें वर्षमें गिरकर मरता है या दश या तेवीस या नहींतो अस्सी वर्षमें पोष या मगसर महिने में अन्धेरी रात में मरता है।

सिंह राशिमें जन्माहुआ पुरुष श्रीमान्, मानी, परिभ्रमण करनेवाला, विनीत, शीतसे भय खानेवाला, तुरन्त क्रोध करनेवाला, सपुत्र, मातादि, गुरूजनको

वल्लभ, व्यसनी, लोगोंमें प्रसिद्ध, पीले नेत्रवाला, राज भक्त, मिष्टान्न खानेवाला, पराक्रमी और पीछेसे वैराग्य पानेवाला होता है। और पचास वर्षका होकर मरे या नहींतो अस्सी वर्षका होकर चैत्रमहिने मघा नक्षत्रमें शनीवारको तीर्थ क्षेत्रमें मरता है।

कन्या राशिमें जन्माहुआ मनुष्य, स्त्रियोंको आनन्द देनेवाला, धनवान, दाता, दक्ष, कवि वृद्धपनेमें धर्मपरायण, सर्व लोगोंको प्रीय, नाटक और गानेके व्यसनमें आसक्त, प्रवासी, स्त्रीसे दुःखी, नेत्र रोगी, निर्भय तथा कमर और उदरमें दर्दवाला, बीस या तेवीस वर्षका होकर शिररोग, जल, अग्नि या शस्त्रसे मरे या नहींतो अस्सी वर्षमें मूल नक्षत्रमें वैशाख महिनेमें बुधवारको मरे।

तुला राशिमें जन्माहुआ मनुष्य, अति रीसवाला, दुःखी, स्फुट बोलनेवाला, क्षमाशील, चपल नेत्रवाला, चञ्चल, लक्ष्मीवाला, घरमें वल बतानेवाला, व्यौपारमें कुशल, देवपूजक, मित्रवत्सल, प्रवासी, मित्रोंको प्रिय, उदार, सत्यवक्ता, अलुब्ध, दाता, लम्बे नेत्रवाला, दयालु,

निपुण और संग्रह करनेवाला, तेवीसमें वर्षमें भींत आदि पड़नेसे मरनेवाला अथवा अस्सी वर्षमें अनुराधा नक्षत्रमें ज्येष्ठ महिने मंगलवारको मरनेवाला होता है।

वृश्चिक राशिमें जन्मनेवाला पुरुष बाल्यावस्थासे प्रवासी, क्रूर, शूर, पीले नेत्रवाला, परस्त्रीमें आसक्त, मानी, स्वजनमें निष्ठुर, लक्ष्मीको तुरन्त प्राप्त करनेवाला, अपनी माताओंमेंभी दुष्टबुद्धि रखनेवाला, धूर्त, चोर और व्यर्थ परिश्रमी होता है और वह बिच्छू, अश्व, या चोरसे अठारा वर्षमें मरनेवाला या पच्चीस वर्षमें मरे या नहींतो आखीर सित्तर वर्षमें मरनेवाला होता है।

धन राशिमें जन्मनेवाला पुरुष शूरवीर, सत्यवादी, बुद्धिमान्, सात्त्विक, लोगोंको आनन्द देनेवाला, शिल्पकला सहित, धनिक, अग्रेसर, मानी, चारित्रसम्पन्न, मधुर भाषी, तेजस्वी, स्थूल देहवाला, कुलको नाश करनेवाला, राज्य मान्य, आखीर, दरिद्री, मित्रद्वेषी, क्लेषप्रिय और पगकी अँगुलीमें छेदवाला होता है। और वह जो अठारवें

वर्षमें नहीं मरे तो सित्तर वर्षमें आषाढ़ या श्रावण महिने शुक्रवारको मरनेवाला होता है ।

मकर राशिमें जन्मनेवाला, स्वजनको प्रिय, स्त्रियोंके वश, पण्डित, शीलसम्पन्न, गायक, गुह्यभागमें लांछनवाला, पुत्रवाला, मातृवत्सल, धनी, दाता, सुरूपी, शीतल, बहुत रिश्तेदारवाला, इच्छित सुखपानेवाला, अस्थिर कार्यवाला, और कुतुहली होता है, वह जो वीसवें वर्षमें नहीं मरे तो सत्तर वर्षमें रेवती नक्षत्रमें श्रावण महिनेमें शनीवारको शूल रोगसे मरनेवाला होता है ।

कुम्भ राशिमें पैदा होनेवाला मनुष्य दाता, आलसी, कृतघ्न, हाथी और घोड़ेके जैसा आवाजवाला, डेड़के जैसो कुक्षिवाला, निर्भय, धनभोगी, अच्छा साथवाला, स्तब्ध दृष्टिवाला, हाथ चालाकीवाला, मान और विद्याके लिये उद्यम करनेवाला, पुण्यवंत, स्नेहहीन, भोगी, शूर, कवी, गुणज्ञ और दूसरोंके कामके लिये बोलनेवाला होता है । और जो सत्तावीसवें वर्षमें वायसे नहीं मरे तो सत्यासी वर्षमें भादवा महिनामें पानीमें गिरनेसे मरता है ।

मीन राशिमें जन्मनेवाला गम्भीर चेष्टावाला, शूर बोलनेमें चतुर, मनुष्योंमें श्रेष्ठ, क्रोधी, प्राज्ञ, समरमें वीर, कृपण, बन्धुमें वात्सल्यतारहित, गांधर्वविद्या जाननेवाला, हमेशा अन्याई की सेवा करनेवाला, मार्गमें शीघ्रतासे चलनेवाला, निर्लज्ज, दिखनोटा, सत्यवादी, देवगुरुका भक्त, बहुत शत्रुवाला, अलंकारोसे आसक्त, दक्ष, चपल नेत्रवाला, परदालम्पट, द्रव्यको प्रीय गिननेवाला, अस्थिर और नम्र होता है। और वह अठारवें वर्षमें नहींतो पचहत्तर वर्षमें मरे।

हे देव ! यह मेषादि राशियोंका गुण जो मेने कहा, वह पहिले सर्वज्ञ भगवंतने अपने शिष्योंको निवेदन किया हुआ है। क्योंकि ज्योतिर्ज्ञान और निमित्त तथा दूसरा वैसाही अतींद्रियार्थ शास्त्र है वह सब सर्वज्ञका कहा हुआ है। उसमेंजो अभ्यास करनेवालेकी गफलतसे है, क्योंकि अल्पज्ञ पुरुष शास्त्रके शुद्ध विभागको जानता नहीं बलवान राशिसे जो क्रूर ग्रहोंकी दृष्टि नहीं होतो ऊपर बताये हुए उनके गुण देनेवाली है, अन्यथा नहीं, एसा समझलेना।

फिर अकलंक राजाने कहा कि:–" तेने कहा वह सच है, उसमें किसी प्रकारका सन्देह नहीं, ऐसा कहकर दान सन्मानादिसे उसका सत्कार करके रवाने किया। फिर बड़े आनन्दपूर्वक ठीक समय कुमारका नाम बलि रखा, पांच धाय माताओंसे लालन पालन होता हुआ और पुण्योदयकी साहयता पाताहुआ वह कुमार बड़े सुखपूर्वक वृद्धि पाने लगा, बाल्यावस्थासेही अति परिचित होकर सद्बोध उसकेसाथ रहनेलगा, सम्यग्दर्शन ने तो पहिलेहीसे उसका सन्निधान छोड़ा नहीं था–उससे देव दर्शन करनेसे उसको बहुत हर्ष होता, गुरुजनोंके चरणमें वंदन करनेसे उसको आनन्द होता और स्वाध्यायादि श्रवण करते हुए उसका मन प्रफुल्लित होता था।

पुण्योदयादिकके प्रभावसे सब कलाओंको उसने जल्दी सीखली कुमारावस्थासेही पुष्ट पुण्योदयसे आकर्षित होकर गुरुता उसके सन्निहिता हुई, स्थिरता उसको क्षणभर छोड़ती नहीं और गम्भीरता सदा उसके पासही रहती थी। इस प्रकार सद्गुणोंके आगमनके साथ वह धीरे २

यौवनावस्था और रूप तथा सौभाग्यको प्राप्त हुआ। फिर वह हमेशा कलावंत कुमारोंके साथ शास्त्र विनोद करता, चैत्योंमें स्नात्रयुता कराता, पूजा प्रवर्तीता, रथयात्रा कराता, गीत, नृत्य, वाजींत्र और नाट्यादिकसे जिन शासनकी उन्नति करता, दीनोंको दान दिलाता, सद्गुरुके पाससे सदागम सुनता, वहां चारित्र-धर्मकी समस्त सेनासे उसको परिचय होते हुए उससे भयभीत होकर मोहमहाचरटका सैन्य दूर २ भगता, इससे विषयराग उसका स्पर्शही नहीं करसकता, द्वेष पास आ नहीं सकता, वैश्वानर पासही नहीं आता, शैलराज भी पास नहीं आता, पिशुनता उसके हृदयमें वास तक नहीं करसकती, लोभ नजरही नहीं आता, स्पर्शाभिलाप उसको तकलीफ नहीं देसकता, रस लोलताको तो वह बात तक नहीं जानता, गन्धवृद्धिकी कथातक वह नहीं सुनता, मनोहर रूपको वह देखताही नहीं, मधुर शब्दसे कानको तन्मय नहीं करता, कृपणता तो उसके पास स्वप्नमेंभी नहीं आती और अविनय उसके पास ठेरही नहीं सकता था, इससे विनय, उपशम, मार्दव, आर्जव, सन्तोष, जितेंद्रियता, औदार्य, गांभीर्य,

स्थैर्य, शौर्य, आदि गुणमय उसका शरीर होनेसे उसकी कीर्ति दिगन्त-तक फैलने लगी। विनयादि गुणोंसे रंजित होकर माता-पिता उसपर बहुतही स्नेह करनेलगे। उसका क्षणभर वियोग सहन नहीं करसकते, उसकी गुण कथा घर २ फैलनेलगी, देवांगनाभी उत्कण्ठापूर्वक उसके गीत गाने लगी, देवता, वन्दिजन और सुकवी काव्यों में रचे हुए और शरदऋतु जैसा सुन्दर उसको चारित्र सिखानेलगे।

इस प्रकार सब भवनमें वह्नि कुमारके गुण फैलजानेसे उसपर अत्यन्त अनुरागसे विह्वल होकर कामदेवसे परवश मनवाली अपनी सौंदर्यातिशयसे रम्भा और रति के रूप गर्वको तिरस्कार करनेवाली, समस्त गुणरत्नोंकी रोहण भूमि जैसी अपनी महा विभूति सहित, बहुत भवोंमें संचित किया हुआ महाभोग. फलरूप पुण्योदयसे आकृष्ट होकर ओर स्वयमेव वरको पसंद करनेवाली ऐसी महाराजाओंकी कन्याएं उसको वरनेके लिये एक साथ वहां आई। इससे अत्यन्त प्रमुदित होकर अकलंक राजाने

उनके रहनेके लिये महल दिया । फिर उन कन्याओंका कुमारके साथ शादी करनेका ज्यादे आग्रह देखकर राजा और राणी दोनों नम्रतापूर्वक वलि कुमारको एकान्तमें बुलाकर कहा कि:—हे वत्स ! जो हमको तू मान देने योग्य गिनता हो, धर्मके सारको जानता हो और तेरे गुणोंको श्रवण कर आकर्षित होकर बड़े २ राजाओंकी भेजीहुई उनकी पुत्रियें आईहुई हैं जो पीछी निराश होकर वापस जाय तो यह हमको महा दुःखका कारण होगा । ऐसा तू समझता हो तो महोत्सव और मंगलपूर्वक इनका पाणि ग्रहण कर और वड़ा मनोरथ धारकर आईहुई इन बिचारी अबलाओंको अपना राज्य सम्बन्धी सुख बता. फिर राज्यका अनुभव कियेहुए हम जब पञ्चत्वको प्राप्त होजावें तब राज्यभार तेरे पुत्रको देकर जोकुछ तेरे करना हो वह करना, ऐसा करनेसे पितृवत्सलतासे तेरेको कुछ हानि नहीं है" इस प्रकार सुनकर वलि कुमारने विचार किया कि:—"अहो मा–बाप का वड़ा आग्रह है और इनकामैं एकाएक पुत्र हूँ इससे जो मैं इनके वचनका उलंघन करूंगा तो इनको वहुत दुःख होगा और मेरी

जोधारणा है वह तो अखीर श्वासतक पार पाड़ना है परन्तु अभीतो इनके मनका समाधान करूं और इस तरह अवश्य भोगने योग्य कर्मभोग भोगूं।" इस प्रकारके अभीप्रायसे बलिकुमारने अपनी इच्छा नहीं होतेहुए भी माता-पिताका वचन कबूल किया याने उसने शुभलग्नमें उन कन्याओंके साथ महा विभूतिपूर्वक शादी की।

फिर अकलंक राजाने कुमारके क्रिड़ा करने योग्य शिलका शिखर अच्छा सरोवर और अनेक क्रीड़ा वापी युक्त बड़े उपवनसे सुशोभित रमणीक एक बड़ा महल मध्य भागमें बनवाया और उसके पिछले भागमें उसकी स्त्रियोंके योग्य पात्रोंको रचनावाले बत्तीस प्रकारके नाटक को देखते २ उन रमणियोंके साथ पहिलेके जैसे उपार्जन किया हुआ देवलोक जैसेके सदृश विपुल भोग भोगते और पूर्वोक्त विधिसे धर्मका आदर करते हुए बलिकुमारने बहुत दिन व्यतीत किये, ऐसे राज्यका जिसने बहुत समय तक पालन किया, संसारसे जिसका मन विरक्त हुआ है और जिसकी जैन दीक्षा लेनेकी इच्छा

हुई है ऐसा अकलंक राजाने उसको राज्यगादीपर बैठा-कर आपने कुवलचन्द्र केवलीभगवंतके पासमें दीक्षाली। फिर तीव्र तपश्या करके थोड़े दिनोंमें मोहादि शत्रुओंका क्षयकर वह राजर्षि मोक्षमें गया। सुदर्शना राणीनेभी राजाके साथही दीक्षाली. उसका सम्यग् तरहसे प्रतिपालन करके देवलोकमें गई।

अब अत्यन्त पुष्ट हुए २ ऐसे पुण्योदयसे वल्लिकुमा-रको महानरेन्द्र बनाया, याने जिसके पूर्वजोनेभी नहीं साधे ऐसे अनेक माण्डलिक सामंत सीमाके राजाओंको और दुर्धर चरटोंको वश किया। उसने चालीस लाख पूर्व निष्कंटक महाराज्य पाला। और वीस लाख पूर्व कौमारावस्थामें व्यतीत किया। इस प्रकार साठ लाख पूर्व पर्यन्त उसने देवताओंके मनको चमत्कार उपजाने-वाला जिन शासनकी बड़ी २ प्रभावना की। अनेक जगह उसने जैन मन्दिरोंका जीर्णोद्धार कराया, स्वदेशमें अनेक गावोंमें नये २ जैन चैत्य बनवाये, सब जगह बड़ी २ रथयात्रायें की, जैनधर्मकी अतिशय उन्नति की और

देवताओंकोही स्पृहणिय ऐसे महाभोग भोगे।

अब एकदिन चौदसके रोज उपवास करके बलिरा-जाने सूर्यास्त समय देवार्चन करके स्वाध्याय ध्यानमें एकाग्र होकर सामायिकयुक्त पौषध ग्रहणकर, शुभ भावसे रात्री व्यतीत करके प्रातःकाल सद्बोधादि चारित्रधर्म राजाके सैन्य विशेषपास आते समय इसप्रकार विचार किया कि:-" अहो! देखोतो सही, मैं सामान्य आदमीकी तरह विषयरूप मांसके लव मात्रमें लुब्ध होकर अति दुर्लभ ऐसे मनुष्य जन्मको पाकर हार रहा हूँ। सागरोपम तकके दिव्य भोगसे जो प्राणी तृप्त हुआ नहीं उसको विण्डबना और असार ऐसे इन पाँच दिनोंके मनुष्य सम्बन्धी उपभोगसे क्या तृप्ति होनेकी है? इस अपःधर्म तत्व दृष्टिसे विचार किजिये तो इस जीवलोकमें कुछभी रमणीक वस्तु देखनेमें नहीं आती है तो भी यह सब अनित्यतारूप महासिंहणी के मुख्य रूप खड्डेमें पड़ा हुआही है। वो इस प्रकार:-

मूर्खलोग अपने रूप और यौवनसे अपने शरीरको

सुन्दर मानते हैं। अब उस रूप यौवनका कुष्टादिक रोगसे इस तरह नाश होता है कि जिससे प्रथम देवांगनाओंसेही चाहने योग्य होकर फिर चान्डालणीसेभी नफरत करने योग्य होता है। कभी भाग्यवश रोग नहीं हो तोभी दोनों का नाश करनेवाली जरादिकतो प्रतिक्षण पासही रहती है और जो लक्ष्मी सामान्यजनोंको साररूप दीखती है वह महाक्लेश सहन करते हुएभी प्राप्ति नहीं हो सकती अगर कभी प्राप्तिभी होजावे तोभी देखते २ इस तरहसे नाश हो जाती है कि उसके सद्भाव जगतमें जिसका मान्य होना है उसके जाने बाद वह दूसरेके घर दासपना करता है। दैवयोगसे कभी लक्ष्मी कायम रहेतो उसका सर्वथा परिहार करके यह जीवही जन्मान्तमें जाता है,इससे उसका प्रतिबन्ध करना किस कामका है ? मोटाईका जो अभिमान है वह सिर्फ अविवेकहीकी चेष्टा है; क्योंकि पुण्योदयका नाश होतेही साक्षात चक्रवर्त्तीभी भिक्षाके लिये भटकते हैं। यह सब राजा आदिके देखनेमें आता है। अब कभी जीतेहूए भ्रष्ट नहीं होतो मरने बाद चक्रवर्तीभी उत्कृष्ट सातमी नरकमें जाता है। इसलिये दूसरोंके पास अपने

प्रभुत्वका अभिमान करना किसकामका है ? 'मेरी आज्ञामें रहनेवाले बहुत पुत्र हैं, स्नेहवती और रूपवती मेरी स्त्री है, और दूसरे कुटम्बी मेरी आज्ञाके वशमें हैं, इसलिये मेरा कुटुम्ब श्लाध्य है' इसप्रकार विचार करनेवाले कितनेक प्राणी प्रेमसे परवश होजाते हैं, यहभी विना विचारकी बात है। क्योंकि पुत्र कलत्रादिक सब अभिष्टलोग स्वार्थीही होते हैं और जो उनका स्वार्थ नहीं होता तो वे सब प्रेमरहित हो जाते हैं. उसमेंही कभी अपने उसको अत्यन्त अभीष्ट होंगे तो रोग,बुढ़ापा, और मृत्यु आदिसे अपना रक्षण करनेके लिये वे समर्थ नहीं, इससे थोड़े समय में मरकर पुत्रादिक सबोंका अवश्य त्याग करना पड़ता है। इसलिये ऐसी सुन्दरतासे क्या ? 'मैं कर्म प्रिय गीता सुनताहूँ, सुन्दर रूप देखता हूँ, सुगन्ध आदि द्रव्योंका उपभोग करता हूँ, मनोज्ञरसोंका स्वाद लेता हूँ और कोमल तथा अभीष्ट ऐसे स्पर्शोंका उपभोग लेता हूँ' इसप्रकार कितनेक जीवोंको विषय की सुन्दरता का अभिमान होता है, यह सब अज्ञानताहीका प्रभाव है, क्योंकि अभि प्राप्त हुए २ विषयोंका उपभोग करते, समयान्तरमें जैसा जिसका

वियोग होता है वैसे उससे अनेक दुःख उत्पन्न होते हैं अथवा हमेशा ऐसे विषय प्राप्त होनेसे पुण्यकर्म किये विना मरते समय प्राणियोंको उन विषयोंका वियोग होनेसे उसके विपाक का अनन्तगुना दुःख होता है। इसप्रकार दूसरी जो कुछ संसारिक वस्तु भ्रान्तिसे सुन्दर लगती है, वे सब अनन्त दुःखरूप फल देनेवाली है। यह बात इस समय बराबर समझ सकता हूँ इससे सचमुचमें प्रेमरूप दण्डके अभिमानसे मूर्छा पायाहुआ राज सुखरूप शराबसे मत्त हुआ २ और वैभवरूप धतूरा खानेसे विपर्यस्त होने जैसे इतने दिन खोये हैं। अब किसी तरह भगवन्त कुवलयचन्द्र केवली यहां पधारें कि जो इस संसार सागरमें अकलंक मेरे पिताको नाव समान हुए हैं तो मैं उनके पास चारित्र अंगिकार करके अवश्य मेरा कार्य साधूं" इत्यादि शुभ चिन्तवन करतेहुए सुबहमें पौषध व्रत पाल-करके स्नानादिकसे पवित्र होकर देवार्चन कर बलिराजा सभा मण्डपमें आकर बैठा।

इधर भगवान् कुवलयचन्द्र केवली बलिराजाका

अभिप्राय जानकर और योग्यसमय देखकर चन्द्रपुरी नगरी के पासके मृगरमण नामके बगीचेमें पधारे। वहां देवताओंने तुरत सुवर्णमय कमल रचा। उसपर केवली भगवान विराजमान हुए। फिर वहां आये हुए देवता और विद्याधरोंने अमृत तुल्य धर्म देशना देनेकी उनसे प्रार्थनाकी। उनके आनेकी बात सुनकर हर्षसे रोमाञ्चित शरीरवाला हुआ२ बलिराजा सब ऋद्धि सहित वहां आया और पञ्चाभिगम करके तीन प्रदिक्षणा देकर भक्तिपूर्वक उनको प्रणाम कर शुद्ध जमीनपर उनके पास बैठा। फिर धर्म सुनकर प्रसंगवस उसने कहा किः-"हे भगवन्! यह मनुष्य जन्म लगभग सब निरर्थक हारकर अब मैं आपके चरण युगल के शरण आया हूँ। इसलिये बाकी रहे हुए मेरे मनुष्य जन्मको आप किसी तरह सफल करो" केवली भगवंत बोले कि :-"हे राजन्! इस जन्ममें तू क्या हारगया है? यहतो बहुत कम है परन्तु पूर्व भवोंमें तू इतना ज्यादे हार गया था कि उसका वर्णन करनेसे सारे संसारको भय और आश्चर्य होता है" तब बलिराजाने कहा किः-हे स्वामिन्! तो मैं पहिले यहही सुननेकी इच्छा करता हूँ,

इसलिये आप कृपा करके कहो"। तब केवली भगवन्त बोले:-"हे राजन्! सारा आयुष्य पूर्णहोने तकभी पूरा२ कहाजाना अशक्य है। परन्तु जो तेरेको सिर्फ आश्चर्यही होता है तो कुछ संक्षेपमें कहता हूँ वह सुन:-

"वर्तमानकालसे अनन्तकाल पहिले तेरेको चारित्र धर्म राजाकी सैन्य सहायक होकर मोह शत्रुकी सैनाका क्षय करेगा, ऐसा कह कर कर्मपरिणाम राजा तेरेको असं व्यवहार निगोद नामके नगरसे बाहर निकाल व्यवहार निगोदमें लाया। तब यह व्यतिकर जाननेमें आतेही क्रोधित हो मोह वगैराने तेरेको वहांही अनन्तकालतक बांधरखा। फिर कर्मपरिणाम तेरेको पृथ्वीकाय, अपकाय, तेजस्काय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पञ्चेन्द्रिय, तिर्यञ्च, नरक और अनार्य मनुष्योंमें लेगया। वहांसे बार २ बीच २ में मोहादि क्रोधित होकर तेरेको पीछा पलटाकर निगोदादिकमें लेगये। इसप्रकार उन्होंने तेरेको इतना फिराया कि अति दुःखित हो परिभ्रमण करते अनन्तपुद्गल परावर्त चलेगये, फिर

आर्यक्षेत्रमें तेरेको मनुष्यजन्म कई समय दिया, परन्तु कहीं कुजाति भावसे, कहीं कुलदोषसे, कहीं जात्यंध, बधिरत्व और पंगुपनं दोषसे, कहीं मनुष्य होतेहुए धर्ममें नाम मात्रको जाने बगैर पूर्ववत तेरेको पीछा पलटाकर मोहादि शत्रुओंने एकेन्द्रियादिकमें लेजाकर अनेक पुद्गल परावर्त्त तक फिराया।

एक समय श्री निलय नगरमें धनतिलक श्रेष्ठीका तू वैश्रमण नामका पुत्र हुआ, वहां 'स्वजन, धन, भवन, यौवन, वनितादि सब अनित्य समझकर हे भव्यों! आपत्तिसे रक्षण करनेवाला ऐसा धर्मका रक्षण करो'! इस प्रकारका उपदेश सुनकर तेरेको धर्म करनेकी बुद्धि हुई। परन्तु वहां सिर्फ कुदृष्टि होनेसे परमार्थसेतो महा पाप बुद्धिही थी। उसके वशसे तू स्वयंभू त्रिदण्डीका शिष्य हुआ। इससे वहांभी मनुष्यजन्मको हारकर फिर संसारमें अनन्त पुद्गल परावर्त्ततक फिरा। फिर अनन्तकाल बीतनेपर फिर तू मनुष्य जन्ममें आया, मगर शुद्ध धर्म श्रवण के अभावसे वह कुधर्म बुद्धि निवृत्त न हुई। किसी समय

सद्धर्मका श्रवण होतेहुएभी सद्गुरु समागमके अभावसे, किसी समय आलस्य और मोहके हेतु समूहसे, किसी समय शून्यतासे लियेहुए उसके अर्थपर लक्ष्य न होनेसे और किस समय अश्रद्धासे कुधर्म बुद्धि निवृत न हुई। इससे कुधर्म बुद्धिके उपदेशसे धर्मके बहानेसे पशुवधादि महापाप करके पूर्ववत तू अनन्तपुद्गल परावर्त्ततक फिरा। फिर विजयवर्धनपुरमें सुलस श्रेष्ठीका नन्दन नामका पुत्र हुआ। वहां पाप प्रवृत्ति करनेसे उस कुदृष्टिको छेदकर आयुवर्जी दूसरे मोहादि सात कर्मोंकी कुछ न्यून कोटाकोटि सागरोपम जितनी स्थिति कर ग्रन्थि प्रदेशतक पहुँचा। परन्तु उसको छेदनेके लिये समर्थ नहीं हुआ. वहांसे अश्रद्धान, राग और द्वेषादिकोने पीछा फेरा। ऐसे अनन्तवार पीछा फिरकर हर समय अनन्तकालतक तेरेको ऐकेन्द्रियादिकमें बांध रखा।

एक समय मलयपुरमें इन्द्रराजाका विश्वसेन नामका पुत्र हुआ, उस भवमें अपूर्वकरणरूप कुठारसे उस ग्रन्थिका छेद किया। फिर अनिवृत्तिकरण प्रवेशादिक्रमसे इतने

समयतक तुझे सम्यकत्व रत्न मिला। मोक्षवृक्षका मूलरूप और अति दुर्लभ ऐसे उस सम्यकत्वको पाकरभी कुदृष्टि रागके वशसे पीछा तू हारगया। फिर धनश्रेष्ठीका पुत्र सुभगके भवमें उस सम्यक्त्वको प्राप्त करके स्नेह रागसे उसका नाश किया। गृहपतिका पुत्र सिंहके भवमें विष-रागसे उसका नाशकिया और जिनदत्तकी लड़की जिनश्री के भवमें द्वेषसे उसका नाश किया। फिर ब्राह्मणका पुत्र ज्वलनशिखके धनञ्जय पुत्र कुबेरका, धनाढ्यका पुत्र सो-मदत्तके भवमें अनुक्रमसे क्रोध, मान, माया और लोभसे तू सम्यकत्व रत्न हारगया।

इसप्रकार मोहादि शत्रुके वशहो असंख्यात् भवोंमें तू सम्यकत्व हारगया। धर्मश्रेष्ठीका लड़का सुन्दरके भवमें हिंसासे देशविरती ऐसा मणिभद्रके भवमें मृषावादसे, सोमदत्तके भवमें अदत्तादानसे, दत्तके भवमें मैथुनसे, धनबहुल श्रेष्ठीके भवमें परिग्रहसे और रोहिणी श्राविकाके भवमें विकथारूप अनर्थदण्डसे इसप्रकार क्रमसे मोहादि-कके दोषसे समग्र सुखकी हेतुभूत ऐसी देशविरतीके

सत्वसे तू असंख्य भव हारगया। फिर अर्विन्द कुमारके भवमें बड़े कष्टसे सब गुणोंकी अधिकारीणी ऐसी सर्व विरति प्राप्त करकेभी क्रोध और मानसे उसको हारगया. फिर अमात्यका लड़का चित्रके जन्ममें विषयकी लुब्ध शीलतासे हारगया, विजयसेन राजपुत्रके भवमेंतो तू सर्व विरति पाकरके ग्यारवें गुणस्थानतक चढ़ा, वहांसेभी कुछ देह और उपकरणकी मूर्छा मात्रसे पीछा नीचे पड़ा। फिर श्रेष्ठी पुत्र पुण्डरीकके भवमें तू फिर सर्व विरतिपन पाया और वहां चोदहपूर्व चढ़ा, ऐसे ऊँचे पदपर आकर निद्राके वश होकर हारगया।

इसप्रकार अनन्तानन्तपुद्गल परावर्त्तोंमें पूर्वोक्त तरहसे मोहादि शत्रुओंके वश होनेसे अनन्तीवार मनुष्य जन्मको तू निरर्थक हारगया। फिर पद्मस्थलनगरमें तू सिंह विक्रम नामका राजकुमार हुआ। वहां फिर तू सर्व विरतिपन पाया, उस भवमें तेने उसका अच्छी तरह आराधन किया और मोहादिकको अत्यन्त क्षीण करडाला, तथा पुण्योदयको पुष्टकिया। वहांसे महाशुक नामका देवलोकमें जाकर

कमलाकर नगरमें श्रीचन्द्रराजाका तू भानु नामका पुत्र हुआ, वहां उसी तरह सर्वविरतीका आराधन किया, मोहादिकको अधिकतर क्षीण किया और पुण्योदयको विशेष पुष्ट किया, वहांसे नौग्रैवेकमें जाकरके पश्चात् पद्मखण्ड नगरमें तू इन्द्रदत्त नामका राजा हुआ, वहां सम्यग्प्रकारसे सर्वविरतिका आराधनकर मोहादिकको ज्यादे क्षीण कर परम प्रकर्षसे पुण्योदयको पुष्ट बनाकर तू सर्वार्थ सिद्ध विमानमें उत्पन्न हुआ। वहांसे चलकर तू इस भवमें षलि नरेन्द्र हुआ है"।

इसप्रकार अपना चरित्र सुनकर बलिनरेन्द्र संभ्रान्त होउठा कुवलयचन्द्रकेवलीके पाँव लगा और बोला कि:- "हे भगवन्! मोहादि शत्रुतो बहुत दुष्ट हैं। इसलिये इस भवमें पूर्ववत् मेरेको दुःख न देनेको आवे उसके पहिलेह कृपा करके चारित्र धर्म राजाकी सेनाके साथ मुझे भेजदो और ऐसा उपाय बताओ कि जिससे वे मेरा पराभवही नहीं करसके और मैं उनका नाश करसकुं। फिर केवली भगवन्तने कहा कि:- "हे राजन्! तुम्हारे जैसेको ऐसाही

योग्य है । इसलिये तुम चारित्र अंगीकार करो जिससे मैं तुमको चारित्रधर्मकि सेनाके साथ भेजदूं. उसके प्रभावसे मोहादि शत्रुका तुम नाश करसकोगे उस रिपुका नाश इस प्रकार करना चाहिये–

सब संगका त्याग करके चारित्रधर्मकाही शरण लो, एक क्षणभर सर्वविरति संगका त्याग न करो, सद्बोध सम्यग्दर्शन और सदागमको अति संनिहित कररखो । दूसरा प्रशम, मार्दव, आर्जव, संतोष, तप संयम, सत्य, शौच, अकिंचनता और ब्रह्मचर्य वगैरा सुभटोंसे और शीलांगादिसे सैन्यमें वृद्धिकरो । फिर सद्बोध और सदागमकी बताई हुई विधिके माफिक अत्यन्त सत्ववान् होकर पूर्वोक्त अनन्त सैन्य सहित सज्जहोकर तुमको मोहादि शत्रुओंके साथ हमेशा युद्ध करना चाहिये । इसप्रकार करनेसे चारित्रधर्मके सैनिक तुम्हारे सहायक होंगे और तुमभी उनके सहायक होकर मोहादिसैन्यका सर्वथा नाश कर निवृत्तिपुरीके स्वामी होंगे" इसप्रकार केवली भगवंत के वचन सुनकर चित्तमें अति हर्षित हो 'ऐसी सामग्री

फिर मिलना मुश्किल है' ऐसा विचारकर तत्त्वज्ञ ऐसा बलि नरेन्द्रने रति सुन्दरी पटराणीके नयसारनामके बड़े पुत्रको राज्यास नपर बिठाने की सामंतोको आज्ञादी उसको राज्यासनपर बैठाकर फिर जिन चैत्यमें पूजा, महादान, और भारी पट्टकी निरूपणा वगैरा महोत्सव पूर्वक राजाओं, माण्डलिको, मन्त्रियोंको, सामंतोको और पौरजनों वगैरा पांचसौ मनुष्योंके साथ तथा अपनी कितनीक रानियोंके साथ वह केवली भगवंतके पास आया, और विधि पूर्वक दीक्षा ली।

फिर गुरुमहाराजकी दीहुई प्रथमकी सब शिक्षा उसने तुरन्त क्रियामें रखदी। सद्बोध और पुण्योदयके प्रभावसे थाड़ेही दिनोंमें वह बाराअंग पढ़गया और अनेक अतिशय सम्पन्न हुआ, फिर मौका जानकर कुवलयचन्द्र भगवन्तने उसको अपने आचार्य्य पदपर स्थापन किया और उनको सर्व गच्छका अधिष्ठाता बनाकर आप शैलेशीकरणसे भवोपग्राही कर्मकी निर्जराकर मोक्षमें गये। फिर सद्बोध और सदागमकी कहीहुई विधिसे समरांगणमें मोहसैन्यका

निकन्दन करतेहुए और बहुत भव्य जीवोंको मोहराजाकी विडम्बनामेसे बचाते हुए बलिसूरिने विहारकर अनेक गाम और देशोंको पवित्र किये।

एक समय अप्रमत्त गुणस्थानको पहुँचनेसे उनको अकस्मात् अध्यवसाय लक्षण क्षपक श्रेणीरूप खड्गयष्टि प्राप्तकरके और उसका प्रथम अनन्तानुबन्धी चार क्रोधादिकको मूलसे नाश किये। फिर अतिशुद्ध, मिश्र और विशुद्ध ऐसे तीन रूपधारी मिथ्यादर्शनको मूलसे निर्मल करदिये। फिर अपूर्वकरण गुणस्थानकको स्पर्श करके अनिवृत्तिवादर गुणस्थानको प्राप्त हुए-वहां अप्रत्याख्यानावरण तथा प्रत्याख्यानावरण रूप आठ कषायोंको मूल सेही उच्छेदन करना शुरू किया, वे आधे नाश हो इतने में नरक गति, नरकानु पूर्वी, तिर्यग्गति, तिर्यगानु पूर्वी, अकेन्द्रिय, दोइन्द्रिय, तीनेन्द्रिय और चौइन्द्रिय रूप चार जाति, आतप, उद्योत, स्थावर, सूक्ष्म और साधारण इस तरह नाम कर्म की तेरा प्रकृति और निद्रा निद्रा, प्रचला२और थीणद्धि ये तीन निद्रा इस प्रकार से सोला

प्रकृतिओं को उसने क्षय करडाला, फिर अर्ध क्षपित, आठ कषायों, नपुंसक वेद, स्त्रीवेद, हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, पुरुषवेद, संज्वलन क्रोध, मान, माया और लोभका क्षय किया मगर संज्वलन लोभका क्षय करते हुए वह सूक्ष्म होकर सूक्ष्म सपराय नामका दशवें पंगिथिये पर जाकर छिप रहा, वहां उसने पिछाड़ी जाकर क्षपक श्रेणीरूप तलवार से उनका नाशकिया।

इस प्रकार अट्ठावीश सोदर्य मनुष्य रूप मोहराजा के पतित होनेपर, वलि राजर्पिसूरि अस्खलित प्रकार से आगे चलकर सिद्धि सौध के क्षीण मोहगुणस्थानक नाम की बारवीं सीढ़ीपर गये, वहां मतिज्ञानवरण,/श्रुतज्ञानावरण, अवधिज्ञानावरण, मनःपयार्थ ज्ञानावरण और ज्ञानावरण इन पांच रूप को धारण करनेवाले ऐसे ज्ञानावरण का नाश किया दानांतराय, लाभान्तराय, भोगान्तराय, उपभोगान्तराय और वीर्यान्तराय इन पांच प्रकार के अंतराय का नाशकिया; निद्रा, पचला, चक्षु-दर्शनावरण, अचक्षुदर्शनावरण, अवधिदर्शनावरण, और

केवल दर्शनावरण इन छः दर्शनावरण भेदों का नाश किया, इस प्रकार घातिकर्म चतुष्टयरूप चार महानायक का नाश होतेही, रिपुसैन्य प्रायः अनाथ और अशक्त होगया, इससे पूर्व ज्ञानावरण और दर्शनावर्ग को आ-च्छादित करदियेहुए सब पदार्थ का समूह को प्रकाश करनेवाला ऐसा केवल ज्ञान और केवल दर्शन उनको प्रगट हुआ। फिर वे सयोगी केवली गुणस्थान नामके तेहरवीं सिढ़ी पर चढ़े तब चारित्र धर्म वगैरा सब परम हर्षित हुए उनके सैनामें कोई भी शरीरमें समाता नहीं था। अर्थात हर्षावेशसे सब पुष्ट होगये थे उसबाद बलि केवलीने बहुत देशों में विहार कर मोहादिकके मर्मोंको वशेष प्रगट करके उसकी विडम्बनाओं से भव्य जीवों को छुड़ाये, वे बलि केवली हे चन्द्रमौलि राजा! तेरेको और दूसरे लोगोंको उस मोहकी विडम्बनासे मुक्त करने के लिये यहां आये हुऐ हैं—हे राजा! अनेक दुःखोंसे मुक्त होनेको सन्तुष्ट हुए २ जनोंने जिनका दूसरा नाम भुवन-भानु रखाहुआ है। वह मोहका शत्रु बलि केवली मैंही हूँ"।

इस प्रकार केवली भगवन्तके वचन सुनकर अतिशय हर्षसे रोमांञ्चित होकर चन्द्रमौलिक राजाने तुरन्त उठ कर पाँव पड़कर कहाः-"हे भगवन् आपने यहां पधार-कर मेरेपर वहुत उपकार किया है। और विशेषकर आ-गम के सब स्वरूपका ज्ञान देनेवाला ऐसा आपका चारित्र कथनसे हमको उपकृत किये हैं" फिर केवली भगवन्तने कहा कि:-"हे राजन्! अपना चरित्र स्वयं कहना ये ठीकनहीं, क्योंकि उसमें अपने गुणोंकी श्लाघा होजाती है और वह धर्म तथा नीति विरुद्ध है, परन्तु तुम्हारे जैसे को उपकारी जानकर मैने संक्षेपमें कहा है। विस्तारसेतो सारी उम्र खतम होजावे तोभी वह नहीं कहाजा सकता, ऐसा मेरा ही चरित्र नहीं मगर सबका समझलेना चौदह राजलोकों में एकेन्द्रिय में ऐसा कोई स्थान नहीं दो, तीन या चौरिन्द्रियों में ऐसा कोई रूप नहीं, जलचर स्थलचर और खेचर तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय में ऐसा कोई व्यक्ति नहीं, नर्क में ऐसी कोई जगह नहीं, इन भूमियों में ऐसा कोई नर्कावास नहीं और मनुष्यपनमें गाम, नगर या स्थान नहीं, कि जहां यह जीव अनन्तवार उत्पन्न

नहीं हुआहो। भुवनपति, व्यन्तर, ज्योतिष्क और सौधर्म, इशान वगैरा देवलोकोमें ऐसा कोई स्थान नहीं कि जहां यह जीव उत्पन्न नहीं हुआहो। सनत्कुमारादिक देवलोकमें और नवग्रवेयक पर्यन्त देवोमें ऐसा कोईदेव नहीं कि जिस स्थानपर सब जीव अनन्तीवार उत्पन्न नहीं हुए हों, इस संसारमें ऐसा कोई सुख या दुःख नहीं, जिसका तुमने अनन्तवार अनुभव नहीं कियाहो। जैनवेपको द्रव्यसे अनन्तवार एक २ जीवके लिये अनन्तकालके अन्तरालमें भव भ्रमण करतेहुए सामान्यतः कथन समझना; विस्तारसेतो यह कहाजाही नहीं सकता क्योंकि यह कहते अनन्तकाल होजाता है और आयुष्य तो मर्यादित है तथा भाषाभी क्रमसेही बोलीजाती है इससे यह अशक्य है। अशरणपनमें मैनेहो इस संसारमें अनन्त दुःखोंका अनुभव कियाहै और कुधर्मका शरण स्वीकार करनेसे विशेष दुःखोंका अनुभव किया है। फिर सम्यग तरहसे जिन धर्मका शरण लेनेसे वासुदेव श्रेष्ठी, चक्रवर्ती वगैरा सुखोंका अनुभव किया है और अब आखीर निवृत्तिपुरीमें अनन्त शाश्वत सुखोंका अनुभव करनेका है। इसप्रकार हमको जो सम्यग् जिनधर्म